ईश्वर

ईशावास्यम् इदम् सर्वम

Initiative for Moral and Cultural Training Foundation

TOGETHER, WE SERVE

वृक्ष वन्दन

वनों का संरक्षण

गंगा वन्दनम

पर्यावरण की सुरक्षा

गौ वन्दन

पारिस्थितिकी–संरक्षण

HSSF

आचार्य वन्दनम

पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों का समावेश

भारत माता वन्दनम

देशभक्ति का बीजारोपण

कन्या वन्दनम

नारी गरिमा की अभिवृद्धि

प्रतीकों के द्वारा गरिमा की स्थापना

वनों के प्रतीक रूप में वृक्षों का सम्मान

वन्य जीवन के प्रतीक रूप में नाग सम्मान

प्राणी मात्र के प्रतीक रूप में गौ का सम्मान

प्रकृति के प्रतीक रूप में गंगा का सम्मान

पर्यावरण के प्रतीक रूप में धरती माता का सम्मान

मानवीय मूल्यों के प्रतीक रूप में माता-पिता का सम्मान

शिक्षण के प्रतीक रूप में शिक्षकों का सम्मान

मातृत्व के प्रतीक रूप में नारी सम्मान

भारत माता के प्रतीक रूप में योद्धाओं का सम्मान

प्रकाशक - हिन्दू आध्यात्मिक एवं सेवा मेला न्यास, जयपुर

सम्पर्क - ९९२९१५१६०५

अनुवादक - डॉ. चक्रवर्ती नारायण श्रीमाली, बीकानेर

सम्पर्क - ९८२९२९७३९२

ईश्वर है

प्रत्येक वृक्ष, प्रत्येक जीवित वस्तु,

प्रत्येक पौधा एवं प्राणी,

स्त्री और पुरुष मानव के समान

ईशावास्यम् इदम् सर्वम

सूक्ष्मतम परमाणु से लेकर ब्रह्माण्ड में पाई जाने वाली प्रत्येक वस्तु ईश्वर की रचना है।

–महात्मा गांधी द्वारा अनूदित ईशावास्य उपनिषद के अनुवाद से

हिन्दू अध्यात्मवाद इस धारणा पर आधारित है कि ईश्वर सर्वत्र व्याप्त है। वह प्रत्येक वस्तु में उपस्थित है, प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक पौधा और प्रत्येक प्राणी में। प्रत्येक वस्तु ईश्वर की रचना है।

प्रतीक ब्रह्मा के रुप में

क्योंकि ब्रह्मा ने ही इस बहुआयामी ब्रह्माण्ड का सृजन किया है।

प्रत्येक वृक्ष, प्रत्येक जीवित वस्तु, प्रत्येक पौधा एवं प्राणी, स्त्री और पुरुष मानव के समान ईश्वर है

ईशावास्यम् इदम् सर्वम

सूक्ष्मतम परमाणु से लेकर ब्रह्माण्ड में पाई जाने वाली प्रत्येक वस्तु ईश्वर की रचना है।

–महात्मा गांधी द्वारा अनूदित ईशावास्य उपनिषद के अनुवाद से

गीता और श्री रुद्रम के मत में ब्रह्मा की सृष्टि

यह धरती, पानी और जल है

सप्त पर्वतों में यह मेरु पर्वत है।
अचल वस्तुओं में यह हिमालय है।
एवं साथ ही
यह मैदानों में और पर्वतों में है
यह धूल में और कीचड़ में है
यह घर के सामान में और गृहरक्षक वास्तु पुरुष में है
यह खुले में और घरों में भी निवास करती है।

वनों में यह वृक्षों के रूप में निवास करती है

वृक्षों में यह पीपल में है

साथ ही

यह वनों में वृक्षों के रूप में तथा झाड़ियों में पौधों के रूप में है
यह सूखी वस्तुओं में लकड़ी और गीली में वाष्प है
यह हरी पत्तियों और सूखी पत्तियों में भी है
यह कंटीली झाड़ियों और गुफाओं में भी है

यह समस्त जीवित प्राणियों में है

पक्षियों में यह गरुड़ है
हाथियों में ऐरावत हस्ति है
गायों में यह सुरभि है
अश्वों में यह समुद्र मंथन से उत्पन्न उच्चैश्रवा अश्व है
साथ ही
यह अश्व भी है और सवार भी
यह कुत्ता भी है और उसका स्वामी भी

समस्त जलों में इसका निवास है

जलों में यह वरुण है।

प्रत्येक वृक्ष, प्रत्येक जीवित वस्तु, प्रत्येक पौधा एवं प्राणी, स्त्री और पुरुष मानव के समान ईश्वर है

ईशावास्यम् इदम् सर्वम

सूक्ष्मतम परमाणु से लेकर ब्रह्माण्ड में पाई जाने वाली प्रत्येक वस्तु ईश्वर की रचना है।

–महात्मा गांधी द्वारा अनूदित ईशावास्य उपनिषद के अनुवाद से

प्रवाहों में यह गंगा है
झीलों में यह समुद्र है

तथा

यह तीव्र जलप्रपातों और महान जल में है
यह तीव्र ज्वार में है और शान्त जल में है
यह लघु सरिता में है और द्वीपों में है
यह नहर के पानी में है झरने में भी
यह तालाब के पानी में है और झील के पानी में भी
यह नदी के जल में है और तालाब के पानी में भी
यह कूप के जल में है और झरने के जल में भी है
यह वर्षा जल में है और मरुस्थल में भी है
यह स्वच्छ आकाश में है और वर्षा धूप में भी है
यह तूफानों में भी है और अंधड़ों में भी है
यह पवित्र जल में भी है और जल के उद्गम में भी है
यह गहरे स्थिर जल में भी है और बर्फ की बूंदों में भी है
यह नदी किनारे की घास में भी है और नदी के भागों में भी है
यह नदी किनारे की बालू रेत में भी है और बहती नदी की धारा में भी है
यह बादलों में भी है और बिजली में भी
यह समतल मैदानों में भी है और नदी के ज्वारों में भी है
यह बंजर भूमि में भी है और राजमार्गों पर भी
इस सूखी धरती में भी है और अन्य स्थानों पर भी इसका निवास है।

यह समस्त वन जीवन में है

सर्पों में यह वासुकी है
नागों में यह अनन्त है
पशुओं में यह सिंह है
मछलियों में यह सार्क है

यह हवा, ध्वनि और ऋतुओं में है

प्रत्येक वृक्ष, प्रत्येक जीवित वस्तु, प्रत्येक पौधा एवं प्राणी, स्त्री और पुरुष मानव के समान ईश्वर है

ईशावास्यम् इदम् सर्वम

सूक्ष्मतम परमाणु से लेकर ब्रह्माण्ड में पाई जाने वाली प्रत्येक वस्तु ईश्वर की रचना है।

-महात्मा गांधी द्वारा अनूदित ईशावास्य उपनिषद के अनुवाद से

शुद्धिकरण में यह वायु है
मासों में यह मार्ग शीर्ष है
ऋतुओं में यह बसन्त है
साथ ही
यह ध्वनि भी है और प्रतिध्वनि भी
यह ढोल की भी ध्वनि है और घूमरी की भी

यह ज्ञान, विज्ञान और स्त्रीवाचक गुणों में है

विज्ञान में यह स्वयं विज्ञान है
विवादों में यह तर्क है
स्त्रीवाचक गुणों में यह प्रसिद्ध, समृद्धि, वाणी और स्मृति और प्रतिभा है।
दृढ़ता और क्षमता
यह सब कुछ है, सब में है और सर्वत्र है
यह मूल बीज है जिससे सम्पूर्ण सृजन अस्तित्व में आता है
यह प्रत्येक वस्तु का बीज है, यह प्रत्येक वस्तु का
स्व है, इसके बिना किसी का भी अस्तित्व नहीं
प्रत्येक वस्तु उसकी ही प्रकृति है
यह प्रत्येक की आत्मा है
उसकी देह में सम्पूर्ण विश्व समाविष्ट है, यहां तक कि चल
भी और अचल भी

तो भी

यह जनता है और नेता भी है। एक प्रजाति का सदस्य है और
प्रधान भी। यह सुदृढ़ भी है और दुर्बल भी। यह रथारूढ़ भी है
और पदाति भी। यह सुथार है और वस्तु है। लुहार है और
हथौड़ा है। यही मछुआरा है। यह संदेशवाहक और सेवक भी है।
यह कुरूप भी है और सुन्दर भी। यह वृद्ध भी है और बालक भी।
(श्रीमद् भगवद् गीता दसवां और ग्यारहवां अध्याय तथा श्री रुद्रम)

हिन्दू आध्यात्मिक एवं सेवा मेला के छः स्तम्भ

हिन्दू आध्यात्मिक एवं सेवा मेले ने छः वैचारिक अधिष्ठानों पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। ये वैचारिक अधिष्ठान गुणवत्ता और मूल्यों पर आधारित हैं तथा आज परिवार संस्था की स्थिरता, समाज और राष्ट्र के दृढ़ीकरण के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। ये छः अधिष्ठान है -

वनों की रक्षा और वन्य जीवन का संरक्षण - यह आज स्थापित हो चुका है कि वन और वन्य जीवन के बिना मानव और प्राणीमात्र का जीवन संभव नहीं है। मानव और वन्य जीवन परस्पर एकात्म है, संग्रथित हैं।

पारिस्थितिकी संरक्षण - विभिन्न पारिस्थितिकी अध्ययनों से यह प्रमाणित हो गया है कि समस्त जीवित प्राणी आन्तरिक रूप से आपस में संबंधित हैं तथा एकात्म है और विश्व के कल्याण के लिए इसे भी सुरक्षा दी जानी चाहिए। मानव और प्राणी मात्र परस्पर संबंधित हैं।

पर्यावरण की रक्षा - यह भी आज एक स्थापित सत्य है कि पर्यावरण की रक्षा विश्व के समस्त राष्ट्र प्रदूषण और पर्यावरण संरक्षण की सबसे बड़ी समस्या से जूझ रहे हैं, स्वस्थ मानवीय जीवन के लिए पर्यावरण की रक्षा की जानी अनिवार्य है। मानव और पर्यावरण परस्पर अन्योन्याश्रित हैं।

पारिवारिक और मानवीय मूल्यों का समावेश - पश्चिम के अनुभव से स्पष्ट हो चुका है कि जिनके परिवार और पारिवारिक मूल्य नष्ट हो रहे हैं, उनका समाज पतित हो रहा है। पारिवारिक मूल्य मानवीय प्रगति और विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। व्यक्ति और परिवार को पृथक नहीं किया जा सकता। उनमें अद्वितीय अन्तर संबंध है।

नारी गरिमा की अभिवृद्धि - महिला उत्पीड़न की बढ़ती घटनाओं और महिलाओं की घटती जनसंख्या से स्त्री-पुरुष अनुपात में आए असंतुलन से उपजी चिन्ता के समाधान हेतु यह आज की सर्वोच्च आवश्यकता है कि मानव समाज, राष्ट्र और संपूर्ण विश्व की भलाई के लिए नारी गरिमा की अभिवृद्धि हो। नारी के सम्मान की रक्षा के बिना परिवार और समाज बिखर जाएगा।

देशभक्ति का बीजारोपण - भारत में धर्म (जीवन मूल्यों) और राष्ट्र - सामाजिक जीवन में एकाकार हैं। इस प्राचीन देश के अलावा सनातन धर्म के लिए कोई धरती सुलभ नहीं है। एक सशक्त राष्ट्र के बिना कोई भी सुरक्षित नहीं है। इसलिए भारत राष्ट्र को एक देवता जैसा सम्मान दिए जाने की जरूरत हैं तथा इस राष्ट्र की सेवा करने वालों का भी सम्मान होना चाहिए।

इस ग्रह में मानव-समाज की निरन्तरता के लिए इन छः वैचारिक अधिष्ठानों के समेकित प्रशिक्षण की आवश्यकता है। मानव जीवन और उसमें माधुर्य, उसका प्रकृति से सामंजस्य तभी संभव है जब वनों, वन्यजीवों के रक्षण, पर्यावरण, पारिवारिक मूल्यों, नारियों और राष्ट्र के प्रति सम्मान भाव की स्थापना हो।

हिन्दू आध्यात्मिक और सेवा फाउण्डेशन पूर्व स्थापित नैतिक सांस्कृतिक प्रशिक्षण नवाचार की एक सहभागी संस्था है। संस्था ने किशोर पीढ़ी को प्रशिक्षित करने के लिए इन छः विचारों को परम्परागत प्रतीकों से संबंधित किया है जिससे जीवन मूल्यों का आधान सहज संभव हो सके।

आइएमसीटी का विश्वास है और उसकी उद्घोषणा है 'मूल्य निर्माण से राष्ट्र निर्माण।' आइएमसीटी के विचारों को हिन्दू आध्यात्मिक एवं सेवा प्रतिष्ठानों ने अंगीकार किया है और अपने वार्षिक उत्सवों के माध्यम से इन छः अधिष्ठानों के प्रति समाज में व्यापक जागृति की लहर पैदा करते हुए इन विचारों का हिन्दू आध्यात्मिकता से संबंध भी उजागर किया है।

सांस्कृतिक एवं नैतिक प्रशिक्षण नवाचार का अधिष्ठान

आइएमसीटीएफ की सोच

आइएमसीटी नैतिक एवं सांस्कृतिक रूप से मजबूत आधार उपलब्ध करवाता है जो कि प्रतीकों एवं विषयों से युवा मन-मस्तिष्क को जोड़ने का कार्य करता है ताकि जब युवा पेड़ पर लगे फल देखे तो उन्हें जड़ों की भी याद आए। वे समझ पाएं कि हर सफलता के पीछे संघर्ष की एक लम्बी कहानी छुपी हुई होती है।

आइएमसीटी ने अपने प्रशिक्षण [संस्कारम्] को प्रत्येक मूल्य के लिए इस तरह से तैयार किया है कि युवा बालक-बालिकाओं के मन में ये मूल्य अपना स्थान बनाएं और वे इन कार्यक्रमों में स्वैच्छिक भागीदारी निभाएं।

आइएमसीटी के कार्यक्रम बनाए ही इसीलिए गए हैं कि हमारी सांस्कृतिक धरोहर, परिवार, समाज, राष्ट्र एवं अर्थव्यवस्था का संरक्षण हो पाए। आइएमसीटी का यह दृढ़ विश्वास है कि मूल्यों एवं गुणों के द्वारा ही परिवार, समाज एवं राष्ट्र का निर्माण होता है।

आइएमसीटी के कार्यक्रम विषयों की त्रयी-मूल्य, संस्कारम् और प्रतीक नामक तीन स्तंभों पर टिकी है। इन विषयों का उद्देश्य विद्यार्थियों में प्रकृति, पेड़, वन्यजीवन, प्राणीमात्र, अभिभावक, अपने से बड़ी, महिलाओं और राष्ट्र के प्रति श्रद्धाभाव जागृत करना है।

आइएमसीटी का उद्देश्य युवा भारतीयों को उनकी राष्ट्रीय एवं वैश्विक जिम्मेदारियों के लिए तैयार करना है क्योंकि भारत एक भू-राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक शक्ति के रूप में उभर रहा है।

आइएमसीटी का यह मानना है कि विषय आधारित संस्कारम् व्यक्तित्व विकास में सहायक है और यह विकास सीधा राष्ट्र निर्माण से जुड़ा हुआ है। आइएमसीटी का ध्येय वाक्य है ''मूल्य निर्माण से राष्ट्र निर्माण।''

संस्कार क्या है?

संस्कार वह कर्म है जो इसके पालनकर्ता को परिष्कृत और पवित्र बनाता है।

कांची महास्वामी का कथन जो कि 20वीं शताब्दी में हमारे बीच रहे और भारत के महान आध्यात्मिक सन्त थे।

'संस्कार' व्यक्ति के जीवन और चरित्र को परिपूर्ण बनाने की प्राचीन भारतीय विधि है जो व्यक्ति में जीवन मूल्यों को अवतरित करती है।

संस्कार एक 'ऐसा कार्य है जो परिपूर्णता प्रदान करता है।'

संस्कार का अर्थ होता है 'वे मनोवैज्ञानिक प्रभाव जो एक व्यक्ति के नैतिक, भावनात्मक और प्रतिभाशाली चरित्र को उच्चतर बनाते हैं।'

संस्कार विचार और क्रिया में निवास करते हैं और वे नियमित व बारम्बार अभ्यास से व्यक्ति के अचेतन मन का एक भाग बन जाते हैं, जो व्यक्ति के चरित्र और व्यवहार को प्रभावित करते हैं और उसके चरित्र को विशिष्ट आकार प्रदान करते हैं।

संस्कार तीन प्रकार के होते हैं-जन्मजात, प्रदत्त और अर्जित। जन्मजात संस्कार एक व्यक्ति के आधारभूत चरित्र का निर्माण करते हैं। पुनर्जन्म के विश्वासी हिन्दू, बौद्ध, जैन और सिख- मानते हैं कि जन्मजात संस्कार पूर्वजन्म के प्रभाव से प्राप्त होते हैं।

प्रदत्त या आरोपित संस्कार व्यक्ति को अपने माता-पिता, परिवार और पर्यावरण से प्राप्त होते हैं।

अर्जित संस्कार एक व्यक्ति को विशेष प्रकार की जीवनशैली के अभ्यास से प्राप्त होते हैं। वे संस्कार जो कि नियमित अभ्यास से प्राप्त किए जाते हैं-अर्जित संस्कार कहे जाते हैं।

आइएमसीटी के पास युवा भारत को अर्जित संस्कारों से समृद्ध बनाने के लिए एक व्यापक और नवाचारी कार्ययोजना है।

ये 'संस्कार' विद्यार्थियों के चरित्र को प्रभावित करने के लिए सुनिश्चित विशेष गुणों और जीवन मूल्यों के प्रशिक्षणपूर्वक दिए जाते हैं। ये गुण और मूल्य-वैचारिक धरातल पर दिए जाते हैं। ये संस्कार वैचारिक प्रतीकों के माध्यम और प्रयोग से युवा मन को और उसके मनोविज्ञान को संस्कारित करते हैं।

विचार, संस्कार और प्रतीकों का त्रिकोण

आइएमसीटी सामाजिक और मनोवैज्ञानिक उपकरणों का प्रयोग करके युवा भारतीय नौजवानों को प्रशिक्षित करने के लिए विचार प्रधान संस्कारों का विकास किया है जो निम्न प्रकार हैं-

क्र.	मूल्य	संस्कारम्	प्रतीक
1.	वन एवं वन्य जीव संरक्षण	पेड़-पौधों एवं वन्य जीवों के प्रति सम्मान	वृक्ष वंदनम नाग वंदनम
2.	पारिस्थितिकी संरक्षण	सभी प्राणी प्रजाति एवं पौधों के लिए सम्मान	गौ वंदनम गज वंदनम तुलसी वंदनम
3.	पर्यावरण संरक्षण	धरती माता, नदियों एवं प्रकृति के प्रति सम्मान	भूमि वंदनम गंगा वंदनम
4.	पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों की स्थापना	अभिभावकों, शिक्षकों एवं अपने से बड़ों के प्रति सम्मान	मातृ-पितृ वंदनम आचार्य वंदनम अतिथि वंदनम
5.	महिलाओं का सम्मान	बालिकाओं एवं मातृत्व का सम्मान	कन्या वंदनम सुवासिनी वंदनम
6.	राष्ट्रभक्ति जागरण	राष्ट्र एवं राष्ट्रीय युद्ध नायकों के प्रति सम्मान	भारतमाता वंदनम परमवीर वंदनम

संस्कारों के द्वारा मूल्य निर्माण

आइएमसीटी द्वारा प्रत्येक मूल्य (विचार) के निर्माण हेतु पृथक संस्कारों की रचना की गई है और इन संस्कारों को चयनित प्रतीकों के माध्यम से व्यक्ति को आत्मसात करने का अवसर प्रदान किया जाता है।

1. वनों के रक्षण और वन्य जीवों के संरक्षण के विचारों को वनों के प्रति सम्मान की भावना जगा कर विद्यार्थी के मानस में स्थापित किया जाता है। इसके लिए वृक्ष को वन का और नाग को वन्य जीवन का प्रतीक मान कर वृक्ष वन्दन या तुलसी वन्दन तथा नाग वन्दन के कार्यक्रम किए जाते हैं।

2. पारिस्थितिकी की सुरक्षा के विचार को जीवित प्राणियों के प्रति सम्मान के प्रतीक से जोड़ा गया है। इन प्राणियों के प्रतीक रूप गज वन्दन, गो वन्दन और सभी पौधों के प्रतीक हेतु तुलसी वन्दन कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।

3. पर्यावरण की सुरक्षा के विचार का प्रतीक गंगा वन्दन और भूमि वन्दन माना गया है। गंगा (जल) तथा भूमि (पृथ्वी) पंचभूतों के प्रतीक माने गए हैं। ये पंचभूत (तत्त्व) हैं-पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश। जिनसे पर्यावरण की रचना होती है।

4. मानवीय और पारिवारिक मूल्यों के विचार का प्रतीक है माता-पिता के प्रति सम्मान। इसके लिए मातृ-पितृ वन्दन और आचार्य वन्दन के संस्कार निर्मित किए जाते हैं। पिता-माता और शिक्षक को समाज जीवन में अत्युच्च सम्मान से मानवीय मूल्यों की स्थापना होती है।

5. नारी गरिमा की अभिवृद्धि के मूल्य का विचार प्रतीक संस्कार है नारी गरिमा और बालिका सम्मान। इसके लिए कन्या वन्दन और सुवासिनी वन्दन के संस्कारों की रचना की गई है। बालिका और नारी मातृत्व के प्रतीक हैं और सृजन की आधार-शक्ति हैं।

6. देशभक्ति के बीजारोपण का विचार मातृ भूमि के प्रति सम्मान से विकसित होता है। इसके लिए भारत माता वन्दन, महान् योद्धाओं के प्रति वन्दन को प्रतीक माना गया है। इन गौरव सेनानियों के सम्मान से जिन्होंने मातृ भूमि के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिए-देशभक्ति का बीजारोपण होता है। इसके लिए परमवीर चक्र आदि विजेताओं के सम्मान से संस्कार निर्माण होता है।

इन विचारों के आधार पर आइएमसीटी ने शाश्वत जीवन मूल्यों की रचना की है। संस्कार प्रशिक्षण प्रदान करने के उपकरण हैं। प्रतीकों में विचारों को मूर्त रूप प्राप्त होता है जिन्हें संस्कार व्यक्ति में साकार कर देते हैं। विचार, संस्कार और प्रतीक के त्रिकोण से आइएमसीटी की अवधारणा साकार रूप ग्रहण करती है।

संस्कार निर्माण में प्रतीकों की भूमिका

यह समझने के लिए कि आइएमसीटी संस्कारों के आधान में प्रतीकों का उपयोग क्यों करता है, हमें प्रतीकों की मानव जीवन में भूमिका को जानना आवश्यक है।

1. एक प्रतीक में विचार के संचार की वह क्षमता होती है जो कि हजारों पृष्ठों के अध्ययन और घंटों व्याख्यान के श्रवण में नहीं होती।

2. एक प्रतीक हमारे मानस को एक गहन सन्देश देता है, हमारे अचेतन मन को संवेदनशील बनाता है और व्यक्ति के चरित्र को केवल विचार में ही नहीं, अपितु व्यवहार में भी प्रभावित करता है। प्रतीक शक्तिशाली स्मृति-संचार है।

3. जटिल विचार, अमूर्त मूल्य एवं दमित संवेदनाओं को सहजता से प्रतीकात्मकता के द्वारा संचारित किया जा सकता है जबकि प्रतीक रहित सामान्य भाषा को ऐसे विषयों को प्रेषित करने में दीर्घकाल, जटिल और कठिन पद्धति से दो-चार होना पड़ता है।

4. प्रतीकों द्वारा जीवन के अनेक पक्षों को सरल से जटिल पद्धति द्वारा द्रुतगति और प्रभावशाली रीति से सम्प्रेषित किया जा सकता है।

5. उदाहरण के लिए ओम का प्रतीक हमारी स्मृति में पूजा और योग से तथा कला और संगीत से संबंधित समस्त स्मृतियों को झंकृत कर देता है तथा व्यक्ति के विचार और व्यवहार को प्रभावित करता है।

6. प्रतीक मानव जीवन से एकात्म हैं। मानव प्राणी अपने दैनन्दिन जीवन में अचेतन स्तर पर अनेक प्रतीकों से प्रभावित होते हैं।

7. समस्त प्राचीन समाजों और सभ्यताओं में प्रतीकात्मकता की प्रभावशीलता सम्प्रेषण को गहन पहचान प्रदान करती है अर्थात् वहां प्रतीकों द्वारा सम्प्रेषण जीवन का एक विशिष्ट, अनिवार्य पक्ष है।

8. आधुनिक समाजशास्त्रियों और मनोवैज्ञानिकों ने काल की कसौटी पर प्रतीकों के विचार सम्प्रेषण की क्षमता को खरा स्वीकार किया है।

यदि नौजवानों के मन-मस्तिष्क को उचित संस्कारों द्वारा संवेदनशील बना दिया जावे तो एक वृक्ष को देखकर उन्हें सम्पूर्ण वन का स्मरण हो आएगा, इसी प्रकार एक गाय के दर्शन से समस्त पशु जगत का बोध होगा। पानी का एक गिलास उन्हें विश्व में व्याप्त जल का स्मरण करावेगा। इस प्रकार अन्त में प्रशिक्षित मस्तिष्क इन सभी में दिव्यत्व की अनुभूति करने लगेगा।

सर्वाधिक आवश्यकता इस बात की है कि प्रतीकों द्वारा चित्त में आधान किए गए संस्कारों को मस्तिष्क प्रतीक देखकर पुनः स्मरण कर सके। संक्षेप में आइएमसीटी का यही प्रयास है।

इसलिए 'मूल्य निर्माण ही राष्ट्र निर्माण' की आइएमसीटी की आधारभूत अवधारणा की सफलता हेतु प्रतीकों से संस्कार आधान अतिमहत्त्वपूर्ण है।

रेवरेन्ड फादर कोचुथारा के विचार

हिन्दुत्व पवित्र प्रकृति और समस्त सजीवों के लिए सम्मान भाव का सृजन करता है।

रेवरेन्ड फादर शाजी जॉर्ज कोचुथारा सीएमआई ने अपने 'ईसाईयत के पर्यावरणीय आध्यात्मिक मूल्यों के अध्ययन' शीर्षक के शोध पत्र में पश्चिमी भारतीय दार्शनिक मतों की तुलना करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि प्रकृति के प्रति सम्मान से पर्यावरण संरक्षण के विषय में पश्चिम को भारत से सीखना चाहिए।

भारतीय परम्परा की मौलिक ब्रह्माण्डीय धारणा यह है कि इस विश्व की रचना ईश्वर ने की है और इसके कण-कण में वह ईश्वर समाया हुआ है और इसलिए यह विश्व पवित्र है। 'ईशावास्यम इदम् सर्वम यत्किंचित जगत्यां जगत' (यह गतिशील विश्व अपने सूक्ष्मतम परमाणु सहित ईश्वर में समाहित है अर्थात् इसके कण-कण में ईश्वर व्याप्त है।) हिन्दू जीवन दृष्टि इस बात की पुष्टि करती है कि न केवल मानव मन अपितु प्रकृति में प्राप्त प्रत्येक वस्तु पवित्र है।

हिन्दू अवधारणा इस विश्व की रचना के भौतिक उपकरण पंचभूत (पंचतत्त्व) हैं। ये पांच महान् तत्त्व हैं-धरती, वायु, आकाश, जल और अग्नि। ये ब्रह्माण्डीय तत्त्व की प्रकृति की रचना करते हैं और सभी प्रकार के जीवन को संधारित करते हैं। मृत्य और जीवन क्षरण के बाद ये तत्त्व अपने पांचों मूल महाभूतों महान् तत्त्वों से- वापस मिल जाते हैं। इस प्रकार पर्यावरण के संरक्षण और स्थायित्व में इन तत्त्वों की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इनकी व्याख्या पवित्र धर्मग्रन्थों में प्राप्त होती है।

वैदिक दर्शन में पशु निम्न प्रकार की रचना नहीं है किन्तु ये मानव की तुलना में ईश्वर की इतर रचना है। बन्दर, हाथी, बाघ, गौ आदि पशुओं का ईश्वरीय परिदृश्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है। 'आध्यात्मिक रूप से मानव और पशु योनि में किसी प्रकार का भेद नहीं है। पशु-पौधों सहित सभी प्रकार की योनियां उसी प्रकार ईश्वर का सृजन है जिस प्रकार जीव। यहां तक कि सूक्ष्मतम मच्छर आदि भी जीव हैं और उनमें भी आत्मा होती है।' इस विश्व के इन मानवेतर प्राणियों के संरक्षण के मानवीय दायित्व के प्रतीक के रूप में गाय की पूजा का विधान किया गया है। इससे इस बात को बल मिलता है कि जीवन के सभी स्वरूपों का सम्मान करना चाहिए।

catholicethics.com/sites/default/files/u3/Shaji_Hekima%2043.pdf

अन्य सभ्यताओं को हिन्दू अध्यात्मवाद से सीखना चाहिये

अपने शोध पत्र का सार लिखते हुए फादर कोचुथारा ने लिखा-'धरती पर स्वामित्व' के आध्यात्मिक विचारों के साथ ईसाईयत पर प्रायः यह आरोप लगाया जाता है कि वर्तमान संकट के लिए ईसाईयत दोषी है। वह स्वीकार करता है कि ईसाई परम्परा में जिन कतिपय बातों पर विशेष बल दिया जाता है, वे प्रकृति के प्रति सम्मान भाव का जागरण नहीं करते। फादर आगे कहते हैं-मात्र एक ईश्वर के प्रति श्रद्धा के अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार की पूजा के निषेध में ईश्वर की रचना में निषेध का भाव निहित है। प्रकृति को पवित्र मानने के किसी भी प्रयास को अनेक ईश्वरों के प्रति विश्वास या मूर्तिपूजन के आरोप से आरोपित कर दिया जाता है। साथ ही मानव प्राणी की शारीरिक क्षमता को अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ मानने के ईसाई विश्वास के कारण भी ईसाई परम्परा में प्रकृति के प्रति सम्मान का अभाव पाया जाता है। इतना होने पर भी पर्यावरणीय विध्वंस की सारी जिम्मेदारी ईसाईयत पर डालना अन्याय है। फादर के शोध पत्र का सबसे महत्त्वपूर्ण अंश यह है कि हिन्दुत्व हमारे (ईसाइयों के) पर्यावरण और आध्यात्मिक चिन्तन की भावी दिशा निर्धारित करने में सहायक हो सकता है। कोचुथारा आगे कहते हैं कि हमें (ईसाइयों को) प्रकृति के प्रति सम्मान का भाव विकसित करना चाहिए।

catholicethics.com/sites/default/files/u3/Shaji_Hekima%2043.pdf

प्राचीन हिन्दू साहित्य के गहन अध्ययन के पश्चात् यह देखकर कि प्राणी प्रकृति के एक अंग के रूप हैं, अतः उन्हें प्रकृति का सम्मान करना चाहिए। आगे इस बात की चर्चा करते हुए कि किस प्रकार ईसाईयत प्रकृति का सम्मान करना सीख सकती है, फादर कहते हैं-

हिन्दुत्व में पृथ्वी और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सम्मान और उसके प्रति कृतज्ञता का स्वभाव, इस बात की संभावना पैदा करता है कि हम साथ-साथ कार्य करते हुए पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना कर सकते हैं। साथ कार्य करने से हम उस आध्यात्मिक अपूर्णता की पूर्ति कर सकते हैं जो अनेक लोग इस पर्यावरण संकट के विषय में अनुभव करते हैं। ईसाई और हिन्दू मूल विश्वासों में कतिपय आधारभूत मतभेद हो सकते हैं किन्तु हिन्दुत्व की बहुदेववादी और प्रकृति पूजक धारणाओं की विवेचना से हमें इन परम्पराओं की सही समझ हो सकती है और हम कार्य करने के लिए समान धरातल का निर्माण कर सकते हैं। इसी प्रकार अनेक लोगों का मत है कि अफ्रीकन प्रकृति पूजकों से भी इसी प्रकार हमारा समन्वय हो सकता है। हमें साथ-साथ कार्य कर सकने की संभावनाओं पर विचार करते समय यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इससे हमें हमारी अपनी पर्यावरण धारणाओं के नवीन उद्घाटन और नैतिक मूल्यों की प्राचीन व्याख्याओं पर पुनर्विचार का अवसर मिलेगा और हम असंतुलन का सुधार कर सकेंगे।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने स्वीकार किया है कि धर्मान्तरण से पर्यावरण का विनाश होता है-हेनरी लैंब

हेनरी लिंब संस्थापक पर्यावरण संरक्षण संगठन 1988, अंतर्राष्ट्रीय संप्रभुता आइएनसी 1996 एवं फ्रीडम आइएनसी (1999) ने अपने पर्यावरण पर विशेष प्रतिवेदन के शोध पत्र 'हमारा धर्म एवं लोक नीति (अक्टूबर 2001)' में यह उद्‌घाटित किया है कि पश्चिम विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका में पर्यावरण संदर्भित धार्मिक विश्वासों के कारण पर्यावरण में बड़ा बदलाव आया है। लैंब प्रतिवेदन कहता है- संयुक्त राष्ट्र संघ ने स्वीकार किया है कि ऐसे धार्मिक विश्वास जो मानते हैं कि विश्व और प्रकृति के सृजन का उद्देश्य मानव को आनन्दित करने के लिए हुआ है, उनके कारण पर्यावरण का यह भय उपस्थित हुआ है।

लैंब कहते हैं- जो धर्म विश्व को यह पाठ पढ़ाते हैं कि 'प्रारम्भ में परमात्मा ने निर्माण किया मानव को' संयुक्त राष्ट्र संघ इसकी निंदा करता है, जो समाज इस प्रकार के विश्वासों से अधिशासित होते हैं, वे मानव को प्रकृति से विलग करते हैं और वे इस प्रकार की मूल्य संरचना को गले लगाते हैं, अपनाते हैं जो विश्व को मानवीय आनन्द की वस्तुओं का भण्डार गृह बना देते हैं। इस प्रक्रिया में न केवल प्रकृति ही अपने पवित्र गुणों को खो देती है अपितु धर्म परिवर्तन से ईसाई बनने का अर्थ होता है, प्राकृतिक संसार से (आइएनसी-इन्टरनेशनल कन्वेंशन-अंतर्राष्ट्रीय अभिसमय) करने वाले वनवासियों, किसानों और मछुआरों के प्रकृति प्रेम से प्रतिबंधित कर देती है। ये लोग अपनी स्वयं की धार्मिक परम्पराओं का पालन करते हैं और अपने अधिकार के भूभाग में से 10 से 30 प्रतिशत तक धरती पवित्र कब्रों और तालाबों के लिए सुरक्षित रखते हैं। विगत 1950 के दशक में इन लोगों को विशालतर बाजार की अर्थव्यवस्था का भाग बना कर ईसाई बना लिया गया। इस प्रकार प्रकृति के पवित्र तत्त्वों के सिद्धान्त को अस्वीकृत करने वाले एक ऐसे धर्म में दीक्षित होकर ईसाई बने लोगों ने खेती के लिए धरती प्राप्त करने के लिए पवित्र पौधों के समूहों को काटना शुरू कर दिया। (वही पेज 839)

यह अत्यधिक चौंकाने वाली और अधिकृत स्वीकृति है जिसमें माना गया है कि परम्परागत विश्वासों से धर्मान्तरण के कारण विनाशकारी वातावरण बनता है।

आधुनिक पारिस्थितिकी एवं हिन्दू आध्यात्मिक प्रतिभा

हिन्दू परम्परा ने प्राणी मात्र के प्रति सम्मान के भाव को अंगीभूत बना दिया है। मानव जीवन समस्त जीवित प्राणियों का सिरमौर-प्रमुख-माना गया है किन्तु जीवन के रूप में श्रेष्ठतर नहीं। आदि शंकराचार्य ने अपने ब्रह्मसूत्र में कहा कि 'यहां 85 लाख योनियां जीवित प्राणी हैं किन्तु उनमें मानव प्राणी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है।' शंकर भाष्य आज से 2500 वर्ष पूर्व रचा गया था। उस भाष्य में शंकराचार्य ने 85 लाख योनियों के अस्तित्व की बात कही है जबकि आज 2011 ई. में जाकर विज्ञान इस संख्या तक पहुंच सका है।

नेचुरल हिस्ट्री म्यूजियम (प्राकृतिक इतिहास संग्रहालय) लंदन के न्यू डार्विन केन्द्र के प्रतिवेदन को गार्डियन न्यूज पेपर ने प्रकाशित करते हुए कहा है कि इस ग्रह पर मानवों की सहभागिता विविध स्वरूपों में मात्र 8.7 लाख है। यह अनुमान धरती पर जीवन के आज तक के अनुमानों में सर्वाधिक सही माना जाता है। धरती पर वंश परम्परागत वर्गीकरण का विश्लेषण करते समय शोधार्थियों ने पाया कि अभी भी अज्ञात योनियां-प्रजातियां- विद्यमान हैं और जीवन के विविध पक्षों का धरती और समुद्र में समानतापूर्ण वर्गीकरण नहीं है। 8.7 लाख जीवों की प्रजातियों का तीन-चौथाई भाग, जिनमें से अधिकतर कीड़-मकोड़े हैं, वे धरती की सतह पर निवास करते हैं, जबकि 2.2 लाख गहराई में निवास करते हैं तो भी धरती की सतह पर 70 प्रतिशत जल व्याप्त है।

Ref : http://www.theguardian.com/environment/2011/aug/23/species-earth-estimate-scientists

जैसा कि कार्ल सैगन ने कहा है कि जो कुछ भू विज्ञान में सत्य है, वह सब कुछ ज्योतिष में भी सत्य है। कार्ल सैगन कहते हैं-'विश्व के महान विश्वासों में से हिन्दू धर्म ही ऐसा एकमात्र धर्म है जो इस विचार को समर्पित है कि स्वयं ब्रह्माण्ड का भी जन्म, विलय और पुनर्जन्म होता है, वस्तुतः अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड भी अगणित जन्म-मरण के चक्र से संचालित होता है। यही वह एकमात्र धर्म है जिसकी कालगणना आधुनिक विज्ञान की कसौटी पर खरी और संगत पाई जाती है। इसका कालचक्र मानव के सामान्य रात-दिन की गणना से प्रारम्भ होकर ब्रह्मा के दिन और रात तक की कालगणना प्रस्तुत करता है। इस कालगणना की प्रथम इकाई त्रस (तीखी सूई से कमल पत्र में छेदने में लगने वाला समय), निमिष, पल-विपल, प्रहर, दिन और रात से गणित करते हुए ब्रह्मा (सृष्टिकर्ता) के एक दिवस (दिन और रात) की संख्या अर्थात 8.4 करोड़ वर्ष तक का विवरण युग, मनवन्तर आदि इकाइयों के माध्यम से प्रस्तुत करती है। यह आधुनिक ब्रह्माण्डीय विज्ञान से संगत पाई जा रही है। यह कालगणना धरती या सूर्य की आयु से भी अधिक और ब्रह्माण्डीय विस्फोट की वैज्ञानिक गणना से करीब आधे समय की गणना है।

इसलिए हिन्दू आध्यात्मिक प्रतिभा ने सृष्टि रचना के रहस्य को अधिकाधिक सही रूप से समझा और प्रकट किया है। यहां तक कि भारतीय गणना आधुनिक विज्ञान से भी अधिक सही है।

पारिस्थितिकी के संरक्षण हेतु आइएमसीटी के विचार प्रधान संस्कार

संस्कार : समस्त जीवित प्राणियों के प्रतीक रूप में गो वन्दन और गज वन्दन के द्वारा संस्कारों का बीजारोपण करना तथा समस्त प्रकार की वनस्पतियों के प्रतीक रूप में तुलसी वन्दन के द्वारा संस्कार प्रदान करना।

इन प्रतीकों से प्राणी मात्र और समस्त वनस्पतियों हेतु सम्मान भाव का सृजन होता है।

हिन्दू एवं समानधर्मी आध्यात्मिकता एवं पारिस्थितिकी

प्राचीन भारतीय जीवनशैली में समस्त जीवित प्राणियों और वनस्पति के रक्षण और सम्मान हेतु निश्चित पशु और निश्चित पौधे को प्रतीक रूप में स्थापित करके उनके प्रति आदर भाव को पोषित कर व्यक्ति के जीवन में अन्तर्निहित कर दिया गया था। प्राचीन भारतीय हिन्दू, जैन और पारसी (जोरेस्ट्रियन) विश्वासों में प्राणी और पौधों के रक्षण को धर्म का अंग बना दिया गया था। रेवरेन्ड फादर कोचुथारा कहते हैं- वैदिक दर्शन में पशुओं को निम्न प्राणी नहीं माना गया है अपितु उन्हें ईश्वर का सृजन माना गया है किन्तु विकास के स्तर पर मानव की तुलना में पशुओं को निम्नतर स्वीकारा गया है। पशु यथा बन्दर, हाथी, बाघ, गाय, बैल आदि का ईश्वर के दृश्य जगत में महत्त्वपूर्ण स्थान है। 'आध्यात्मिक दृष्टि से मानव और अन्य जीवित प्रजातियों में कोई भेद नहीं है। पशु और पौधों सहित जीवन के समस्त स्वरूप, जीव मात्र ईश्वर की रचना है। यहां तक कि सूक्ष्मतम जीवाणु भी ईश्वर द्वारा सृजित हैं और उनमें भी आत्मा होती है।' गाय की रक्षा और पूजा इस बात की प्रतीक है कि मानवेतर जीवन के प्रति मानव का यह दायित्व है।

हिन्दू परम्परा और धर्मशास्त्रों में पशुओं और पौधों का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

विभिन्न पशु और पौधे हिन्दू देवी-देवताओं के या तो वाहन हैं या साथी हैं या सहचर हैं। शिव का वाहन नन्दी, विष्णु का गरुड़, दुर्गा का सिंह, कार्तिकेय का मोर और गणेश का वाहन चूहा है। वानर देवता हनुमान भगवान श्रीराम के सेवक-सखा और सहचर हैं। कृष्ण- गाय, इन्द्र-ऐरावत, ऊँट और सरस्वती के युग्म विश्वविख्यात हैं। शिव के चारों ओर शरीर पर सांप तो विष्णु भगवान शेषनाग की शैय्या पर शयन करते हैं।

ऋग्वेद की एक ऋचा में दस हजार पशुओं-विशेषतः गायों के संदर्भ में उनकी रक्षा का आदेश दिया गया है। गाय की तुलना पवित्र नदी गंगा से करते हुए उसे समृद्धि की अधिष्ठात्री माना गया है।

पुराणों में कृष्ण का वर्णन एक गोपालक के रूप में है। कृष्ण के एक नाम गोविन्द का अर्थ होता है-'गायों को संतोष प्रदान करने वाला।' एक अन्य धर्मशास्त्र में गाय को समस्त सभ्यताओं की 'जननी' बताया गया है। गाय के दूध से जन-जन को पोषण प्राप्त होता है। गाय का वरदान सर्वश्रेष्ठ वरदान माना जाता है।

जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर, प्रथम अवतार का नाम ऋषभदेव है, जिसका अर्थ होता है-वृषभ या बैल।

अहिंसा को समर्पित बौद्ध धर्म जीवन के सभी स्वरूपों को सम्मानित और पवित्र मानता है। बौद्ध धर्म के प्रभाव से चीन, जापान और बर्मा में गोवध और गोमांस सेवन प्रतिबन्धित है। थाइलैंड में बौद्ध धर्म के अनुयायी हस्ति यानी हाथी को साक्षात बुद्धदेव ही मानते हैं। श्रीलंका में कुत्तों को पवित्र माना जाता है यहां तक कि विवाह समारोह को भी उनसे सम्बद्ध मानते हैं।

यहां तक कि जोरेस्ट्रियन जो कि पारसी मूल के हैं- गो को धरती की आत्मा माना जाता है। जोरेस्ट्रियन धर्म के संस्थापक जरथुस्त्र ने गायों की रक्षा का आदेश दिया है। जोरेस्ट्रियन के पवित्र धर्म ग्रन्थ में गोमूत्र की शुद्धिकरण शक्ति को शरीर और मनोबल से संबंधित सभी रोगों में अमृत-औषध माना गया है।

जन-जन के विश्वास में प्रतीकों के माध्यम से चयनित पशु-पौधों को प्रतिष्ठित करके प्राचीन परम्पराओं ने पारिस्थितिकी के संरक्षण को धर्म और संस्कृति के माध्यम से सुरक्षित कर दिया है।

सम्राट अशोक के राज्यादेश : वनों की रक्षा करो और वन्य जीवन की सुरक्षा करो

सुप्रसिद्ध सम्राट अशोक ने प्रस्तर स्तम्भों पर अपने राज्यादेश उत्कीर्ण कराए (वर्ष 256बीसीई), जिनमें कहा गया है कि-मेरे राज्याभिषेक के 26 वर्ष पश्चात् अनेक पशु-पक्षियों को अवध्य-सुरक्षित- घोषित किया जाता है-तोता, मैना, चमगादड़, जंगली बत्तख, मछली, कछुआ, रानी मधुमक्खियां, गिलहरी, हिरण, बैल, जंगली गधा, जंगली कबूतर, कबूतर, हंस, साही, छोटा कछुआ और कमजोर मछली एवं सभी चौपाए पशु जो कि न तो उपयोगी हैं न ही खाने योग्य हैं.... 'अशोक बौद्ध धर्म के अनुयायी थे जो कि हिन्दू और जैन धर्म के अनुसार इस संकल्प से अनुप्राणित था कि पशु भोज्य पदार्थ नहीं है। इन्हें खाना नहीं चाहिए। साथ ही वृद्ध और असहाय, असक्षम गाय की तथा कार्य सेवारत पशुओं को भी यथासमय सेवा से मुक्त करके उनकी भली प्रकार देखभाल करनी चाहिए।

लंका में धर्मप्रचार के लिए पहुंचने पर अर्हत महेन्द्र ने वहां पशुओं के शिकार पर प्रतिबंध लगाने के लिए 247 बी.सी. में हस्तक्षेप किया। 'अर्हत महेन्द्र ने श्रीलंका के राजा देवानामपिय तिस्सा को हरिण शिकार से रोक दिया और राजा से कहा कि प्राणी मात्र को जीवित रहने का समान अधिकार है।' श्रीलंका के ऐलीफेन्टा गुफाओं के संरक्षक जवान्था जयवर्धने के अनुसार राजा को बौद्ध बनने एवं यह आदेश करने के लिए सहमत किया गया कि 'आदेश दिया जाता है कि कोई भी व्यक्ति पशुओं का वध नहीं करे और उन्हें किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंचावे।' जयवर्धने कहते हैं कि 'उसने (राजा ने) अपने राजभवन के चारों ओर विशाल भूमि में समस्त वनस्पति को संरक्षण प्रदान करने के लिए एक अभयारण्य बनाया। यह अभयारण्य महामेथुना उचाना नाम से प्रसिद्ध है और विश्वास किया जाता है कि यह विश्व का प्रथम अभयारण्य है।' अर्हत महेन्द्र और अन्य अशोक के साधु गण जहां भी जाते वहां उनका प्रमुख कार्य होता था पशु-पक्षियों को सुरक्षा दिलवाना। आज भी थाइलैंड और श्रीलंका के बौद्ध साधुओं द्वारा पशुओं को सुरक्षा दिलाने के प्रयासों से अभयारण्यों की संख्या द्विगुणित हो गई है यद्यपि कुछ स्थानों जैसे हाथी मंदिर में काफी समय पूर्व इस परम्परा को क्षति पहुंचाई गई। (एम किल्तरन 2007) बौद्ध विद्वान् वेन एस. धम्मिका के अनुसार अशोक आज भी महत्त्वपूर्ण हैं। विचारधाराओं में व्यापक पतन-क्षरण के दौर में अशोक के आदर्श आज भी जीवन्त हैं तथा लोभ (पूंजीवाद), घृणा (साम्यवाद) और साम्राज्यवाद (नेताओं द्वारा स्थापित तानाशाही) को राजनीतिक पद्धतियों से परे, इन पद्धतियों को अतिक्रान्त करके विश्व को एक राजनैतिक दर्शन प्रदान करते हैं। अशोक के राज्यादेश एक श्रेष्ठ आध्यात्मिक आधार पर अर्थपूर्ण सहभागिता निभा सकते हैं।

हिन्दू आध्यात्मिक साहित्य की पारिस्थितिकी को प्रोत्साहित करने वाली कहानियां

एक रेंगने वाले जीवन की जीवन रक्षा हेतु पारी अपना रथ भेंट कर रहे हैं

ईसा की 9वीं शताब्दी में तमिल चोल राजा पारी वल्लाल का शासन था। पारी उन सात वल्लाल राजाओं में से एक था, जिन्होंने कवियों और विद्वानों को आश्रय प्रदान किया। ऐसा माना जाता है कि द्वारका के समुद्र में डूब जाने के बाद शरणार्थियों का एक समूह काश्मीर में पहुंचा जबकि एक अन्य समूह दक्षिण दिशा की ओर गया। माना जाता है कि राजा पारी महान् संत, ऋषि अगस्त्य के साथ एक शरणार्थी के रूप में तमिलनाडु पहुंचा। माना जाता है कि उसने पाराम्बु नाडू पर शासन किया।

एक दिन पारी अपने रथ पर बैठकर पहाड़ी की ओर जा रहा था। अचानक तूफान आया और राजा ने देखा कि मोगरे के वृक्ष पर रेंगने वाला एक अकेला जीव तेज हवाओं में थपेड़े खाने लगा। राजा ने अपनी सारथी से कहा कि रथ को रेंगने वाले जीव के पास ले चलो। वहां पहुंच कर राजा नीचे झुका और उसने रेंगते जीव को कोमलतापूर्वक अपने हाथों में उठाया और रथ पर अच्छी तरह से, सुरक्षित लपेट कर स्थापित किया। राजा ने अपने घोड़ों को इच्छानुसार घूमने के लिए मुक्त कर दिया। राजा अपने सारथी के साथ पैदल चल कर अपने राजभवन पहुंचा।

गाय द्वारा न्याय की गुहार

मानुनीधि चोज़न द्वारा गाय की शिकायत पर अपने पुत्र को न्यौछावर कर दिया

एलारा जो कि एलालान नाम से भी प्रसिद्ध था। वह मानुनीधि चोल चोल साम्राज्य के एक प्रसिद्ध राजा थे। चोल राज्य वर्तमान में दक्षिण भारत में स्थित है। मानुनीधि ने 205 बी.सी. से 161 बीसी तक श्रीलंका के एक भाग पर भी राज्य किया। प्राचीन राजधानी अनुराधापुर भी उनके राज्य में सम्मिलित था। चोल देश से आए तमिल राजा मानुनीधि एक न्यायप्रिय राजा माना जाता था। यहां तक कि सिंहली भी उसे न्यायप्रिय मानते थे। महावामसा राज्यों में उसका शासन था और वहां यहां तक कि मित्र और शत्रु के साथ भी न्याय किया जाता था। जब विधि के विषय में विवाद हो जाता था तो ऐसे अवसरों पर वह भी जघन्य धार्मिक अपराध पर अपने पुत्र को भी मृत्युदंड की सजा दे सकता था।

एलन को मानुनीधि की उपाधि इसलिए प्राप्त हुई थी कि उन्होंने एक गाय को न्याय प्रदान करने के लिए अपने पुत्र को मृत्युदंड दे दिया था। लोकगाथा यह है कि राजा ने अपने दरबार में एक बड़ा घंटा लगा रखा था, जिसे न्याय चाहने वाला कोई भी बजा सकता था। एक दिन गाय ने उस घंटे को बजाया। घंटे की आवाज सुनकर राजा न्याय कक्ष में पहुंचे। जांच करने पर उसे ज्ञात हुआ कि उस गाय का बछड़ा राजकुमार के रथ के पहियों से कुचलकर मर गया है। न्याय प्रदान करने के लिए राजा ने अपने पुत्र राजकुमार वीधि विदांगन को मृत्युदंड सुनाया और राजकुमार के रथ का स्वयं संचालन करके अपने पुत्र को मृत्युदंड दिया और इस प्रकार प्रायश्चित्त हेतु स्वयं को भी दंडित किया। राजा ने स्वयं उस महान् पीड़ा को भोगा जो कि गाय को भोगनी पड़ी थी।

राजा के इस न्याय से हर्षित होकर भगवान शिव ने उसे आशीर्वाद दिया और गाय के बछड़े तथा राजकुमार दोनों को पुनः जीवित कर दिया। इस महान् राजा का वर्णन शिलापति कर्म एवं पेरिया-पुराण में पाया जाता है। उनका नाम तमिल साहित्य में उसी दिन से सच्चाई और न्याय के महान् प्रतीक के रूप में जाना जाता है। उसकी राजधानी थिरुवरुर थी।

कबूतर की रक्षा हेतु जीवन निछावर करने वाले चक्रवर्ती सम्राट शिवि

प्राचीन काल में पंचनद (पंजाब) में शिवि नाम के एक प्रसिद्ध राजा हुए जो धर्मनिष्ठ और वचन पालक थे। एक बार एक भयभीत कबूतर राजा की ओर उड़ता हुआ आया और शरणागत होकर राजा की गोद में बैठ गया। कबूतर का पीछा करते हुए एक बाज भी राजा के सम्मुख आ पहुंचा। राजा ने कबूतर से कहा- 'डरो मत! तुम मेरी शरण और सुरक्षा में हो।' किन्तु बाज ने राजा से कहा 'हे महाराज! मैं भूखा हूं और मेरा शिकार मुझे दीजिये।' राजा दुविधा में पड़ गया। उसने बाज से कहा 'तुम्हारी भूख मिटाने के लिए मैं तुम्हें अन्य पशुओं का मांस दूंगा, मैंने इस दीन कबूतर को शरण दी है।' किन्तु बाज ने कहा- इस शिकार पर मेरा न्यायसंगत अधिकार है, मुझे मेरा शिकार ही चाहिए। अन्त में बाज इस बात पर सहमत हुआ कि कबूतर के वजन के बराबर मांस स्वयं राजा अपने शरीर से काट कर दे। राजा हर्षपूर्वक सहमत हो गया। तराजू और चाकू मंगाए गए। तुला के एक पलड़े में कबूतर को रखा गया और दूसरे पलड़े में राजा के शरीर से काट कर मांस रखा गया किन्तु कबूतर का पलड़ा भारी रहा। मांस अपर्याप्त था। अतः राजा के शरीर से अधिकाधिक मांस काट कर तुला पर चढ़ाया गया किन्तु फिर भी कबूतर का पलड़ा भारी रहा। इस पर राजा स्वयं तराजू में बैठने को तत्पर हो गया। इस प्रकार का महान् त्याग पहले कभी भी सुना तक नहीं गया। तभी एक चमत्कार हुआ। कबूतर और बाज अपने वास्तविक स्वरूप में आ गए। वे अग्नि देव और देवराज इन्द्र थे और राजा की परीक्षा लेने के लिए आए थे। वे राजा शिवि की सच्ची मानवता को संसार में उजागर करना चाहते थे। अपने जीवन को दांव पर लगाकर राजा शिवि धर्माचरण पूर्वक दोनों की रक्षा करने और न्याय प्रदान करने के लिए तत्पर थे।

हिन्दू अध्यात्म और पर्यावरण

अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरण दिवस, 2010 पर साईं बाबा इंस्टीट्यूट ऑफ बिजनेस मैनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, बैंगलोर के प्रोफेसर एम.डी. बाबा ने इएससीआइपी इन्टरनेशनल बिजनेस स्कूल फ्रांस में 'भारतीय मूल्यों की प्राचीन काल से गांधी तक निरन्तरताः निरन्तर शिक्षा' शीर्षक का शोध पत्र प्रस्तुत किया। शोध पत्र में डॉ. बाबा ने लिखा-

भारतीय दर्शन में युग-युग से पर्यावरण की सुरक्षा तथा इस विषय में वैश्विक नियमों की सदा-सर्वदा उपस्थिति रही है। पर्यावरण की निरन्तरता पंचभूतों के संतुलन और उचित समन्वय से संधारित रखी गई है। भौतिक जगत के ये विश्वव्यापी पांच तत्त्व हैं-पृथ्वी, जल, अग्नि, हवा और आकाश (ईथर)। शास्त्र कहते हैं कि जो कुछ भी अस्तित्व में है, वह सब इन पांच तत्त्वों (पंच महाभूतों) से निर्मित है। इसलिए हम भारत में इन पांच तत्त्वों को दिव्यत्व का प्रतिबिम्ब है, दीप्ति मानते हैं। इन पांचों तत्त्वों की प्राचीन काल से सम्मानपूर्वक पूजा और आराधना की जाती है।

अथर्ववेद में एक प्रार्थना है जिससे हमारा ध्यान इन पांच तत्त्वों द्वारा पारिस्थितिकी संतुलन की ओर सहज ही आकर्षित हो जाता है। इन्हीं पांच तत्त्वों के कारण पृथ्वी-धरित्री-धारण करने वाली के नैतिक विशेषण से विभूषित होती है। वह धरित्री कहलाती है। प्रार्थना है-माता प्रकृति हमें आशीर्वाद दे और हमारे प्रति दयालु रहे, आकाश (स्वर्ग) हमें शांति प्रदान करे, धरती हमारे प्रति दयालु हो, प्रवाहमान जल हमारे प्रति दयालु हो, वनस्पति और औषधि हमारे लिए दयालु हो, भूतकाल हमारे लिए कृपालु हो और भविष्य सुखद हो।' (अथर्ववेद 19.9.1) सार रूप में इस प्रार्थना से हमें पर्याप्त ज्ञान प्राप्त होता है जिससे हम अपनी भावी संततियों, पीढ़ियों के लिए पर्यावरण को सुरक्षित रख सकें।

पंच महाभूतों के सम्यक समन्वय से प्रकृति माता हमारे लिए निरन्तर और सुरक्षित पर्यावरण उपलब्ध कराती है।

आधुनिक युग की चुनौतियों के प्रत्युत्तर में पर्यावरण का दर्शन बल देकर कहता है कि मानव जाति को मानवीयता के अर्थ का पुनः बोध करना होगा जिससे वह पर्यावरण तथा उससे संबंधित विषयों (समस्त जीवित प्राणी समूह, वनस्पति, चट्टानें और वातावरण) अर्थात् जीवन की पर्यावरण व्यवस्था को समझ सके।

पर्यावरण की रक्षा के लिए आइएमसीटी के वैचारिक संस्कार

विचार– पर्यावरण की रक्षा करना (प्रदूषण के विरुद्ध)

संस्कार– पांच तत्त्वों के प्रति सम्मान भाव का जागरण-ये पांच तत्त्व हैं-पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश। भूमि वन्दन के द्वारा पृथ्वी के प्रति और गंगा वन्दन के द्वारा नदियों-प्रवाहमान जल आदि के प्रति सम्मान भाव का प्रस्फुटन करना।

प्रतीक– भूमि (पृथ्वी) और गंगा (नदी) पंचभूतों के प्रतीक हैं।

भूमि वन्दन

माता भूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः

धरती हमारी माता है और हम उसके पुत्र हैं

कैथोलिक, पादरी, सीएमआई धर्माराम कॉलेज बैंगलोर के रेवरेन्ड फादर शाजी जॉर्ज कोचुथारा ने गहन अध्ययनपूर्वक लिखते हुए प्राचीन हिन्दू साहित्य, नदियों और प्रकृति का विवेचन किया और कहा कि यह प्रकृति के प्रति सम्मान की हिन्दू दृष्टि है।

मानव और प्रकृति के मध्य आदर्श सहयोगी सम्बन्ध

अथर्ववेद में पृथ्वी की प्रार्थना में विश्व माता के रूप में पृथ्वी को सभी प्रकार की आनन्द प्रदाता माना गया है। सर्वप्रथम पृथ्वी की उत्पत्ति तथा बाद में इसका भौगोलिक वर्णन किया गया है। इसके बाद पृथ्वी की हर्षित करने वाली सुवास रूपी वनस्पति, जल, कमल, पशु और मानव प्राणियों की सम्पदा का वर्णन किया गया है। धरती मनुष्यों के विचरण का निवास स्थान है। इसी के धरातल पर मानव नाचते-गाते और आनन्द मनाते हैं। पृथ्वी देवताओं द्वारा रक्षित है। वह विश्वव्यापी अग्नि की, आग की, संवाहक है और इसी पर मनुष्य अपने श्रद्धापूर्ण अनुष्ठान सम्पन्न करते हैं। यह समस्त जीवित प्राणियों का निवास स्थल है। पृथ्वी अंतरिक्ष की महत्ता है, अंतरिक्ष की शक्ति है, प्रार्थनाओं को स्वीकार करने वाली और आशीर्वादों की वर्षा करने वाली है। वह हमारी रक्षक और न्यायकर्ता है। धरती माता मानी जाती है 'पृथ्वी मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूं।'

पृथ्वी के प्रति सम्मान और हमारी उस पर निर्भरता की हृदयस्पर्शी अभिव्यक्ति देखिये-मैं तुम पर जो भी खोदता हूं, हे धरती माता! आप उसको शीघ्र पुनः पूर्ण कर लें, हे पवित्र करने वाली! आशीर्वाद दो कि मेरी अधिकाधिक प्राप्ति की चाह आपके महत्त्वपूर्ण अंगों तथा हृदय को कभी भी क्षति न पहुंचावे। वहां तक मैं कभी भी नहीं पहुंच सकूं।

हिन्दू परम्परा में सम्पूर्ण विश्व और समस्त अस्तित्ववान वस्तुओं में जीवन की अन्तर्निहित एकता विद्यमान मानी जाती है। प्राचीन शास्त्रों से जीवन के इस प्रकार परस्पर संबंधित होने, समस्त प्राणियों और सभी जीवनों में आपसी संबंध होने की पुष्टि होती है। इस प्रकार सम्पूर्ण विश्व अन्योन्याश्रित माना गया है।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1968 ने पर्यावरण की निम्न व्याख्या की है-'पर्यावरण में जल, वायु और धरती और इनकी आन्तरिक सम्बद्धता समाविष्ट है। यह पारस्परिक अन्तःसंबंध जल, वायु, पृथ्वी और मानव प्राणियों, समस्त अन्य जीवित प्राणियों, पौधों-वनस्पति, सूक्ष्म जीवाणुओं और सम्पदा में भी समाया हुआ है।'

यह परिभाषा प्राचीन भारतीय साहित्य से ग्रहण की गई है। वैदिक काल से ही सर्वविदित है कि प्रकृति और मानव प्राणी (प्रकृति और पुरुष) मिलकर एक अविभाज्य जीवन तंत्र का निर्माण करते हैं। इसमें पर्यावरण की वर्तमान धारणा समुपस्थित है। उन तीन तत्त्वों को बुद्धिमत्तापूर्वक प्रयोग करो जो पर्याप्त मात्रा में विभिन्न रूपों में दृश्यमान तथा सर्वत्र उपलब्ध है। ये तीन तत्त्व हैं- जल, वायु एवं वनस्पति तथा औषधियां। विश्व के प्रारम्भ से ही ये तीनों अस्तित्व में हैं। ये छन्दांसि कहलाती हैं अर्थात् 'सर्वत्र प्राप्त होने वाली, सर्वव्यापक हैं।' इससे वैदिक ऋषियों का पर्यावरण तथा उसके मूल तत्त्वों संबंधी ज्ञान प्रमाणित होता है। उपनिषदों में पाई जाने वाली एक लौकिक अवधारणा के अनुसार यह विश्व पांच तत्त्वों से निर्मित और संधारित, संचालित है। ये तत्त्व हैं- 1. पृथ्वी 2. जल 3. अग्नि या प्रकाश 4. वायु और 5. आकाश (ईथर) (आत्रेय उपनिषद 3.3.)

पवित्र जल : गंगा वन्दन

नदियां सामान्यतः नारी देवियां हैं जो माता की भांति भोजन और जीवन प्रदान करती हैं। इसी कारण वे विख्यात देवियों में प्रमुख हैं। ये देवियां शास्त्रीय काल की कलाओं की प्रतीक हैं। नदियों में सर्वाधिक पवित्र, सर्वाधिक सम्मानित और सर्वाधिक लोकप्रिय नदी गंगा है। इसका मूर्त स्वरूप देवी गंगा है। पवित्र गंगा नदी न केवल धरती पर जल सुलभ कराती है अपितु जल ही धरती पर अनन्त जीवन का आधार है। भारत में प्रत्येक मंदिर का प्रवेश द्वार उत्कीर्ण मानवीकृत गंगा नदी द्वारा सुरक्षित माना जाता है।

गंगा-अवतरण की कहानी एक पर्यावरणीय कहानी है। एक गंगा जैसी शक्तिशाली नदी के अवतरण से संबंधित जलीय समस्या की कहानी है। हिमालयी पारिस्थितिकी के विशेषज्ञ जर्मन विद्वान एच.सी. रेजर ने भौतिक विवेक से संबंधित इस कहानी का निम्न प्रकार वर्णन किया है-

'प्राचीन धर्मशास्त्रों में यह अनुभूति विद्यमान है कि यदि गंगा अवतरण का समस्त जल पहाड़ों द्वारा नंगी धरती पर गिरेगा तो इस प्रवाह के वेग को वह कभी भी सहन नहीं कर पाएगी। इसलिए गंगा का अवतरण भगवान शिव की जटाओं में कराया गया। हम जानते हैं कि यह एक भौतिक उपाय था जिससे जल प्रवाह की शक्ति को तोड़ कर उसे धरती पर उतारा गया। ... पर्वतों का वनस्पतिकरण हुआ।'

दो पवित्र नदियों गंगा और यमुना के संगम पर स्थित प्राचीन नगर इलाहाबाद (प्रयाग) भारतीय सभ्यता की दीपशिखा है। इस नगर का प्राचीनतम भारतीय साहित्य यथा वेद, पुराण, रामायण और महाभारत आदि में उल्लेख है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू कहते हैं-इतिहास की साक्षी इस गरिमामय विरासत पर मुझे गर्व है। जो कि युग-युग से और आज भी हमारी है और मैं स्वयं भी, अन्य सभी की तरह, मानव सभ्यता के उषाकाल से सतत प्रवाहमान इस संस्कृति की एक कड़ी हूं, एक सेतु हूं जो कि भारत के स्मरणातीत अतीत से चली आ रही है। इसके सम्मान में और भारत की सांस्कृतिक विरासत को श्रद्धा अर्पण करने के लिए मैं अनुरोध करता हूं कि मेरी जीवन लीला समाप्त होने के बाद मेरी एक मुट्ठी भस्म इलाहाबाद में पवित्र गंगा में अर्पित की जावे ताकि वे भारत की धरती के किनारों पर स्थित महासमुद्रों तक गंगा द्वारा ले जाई जावे।'

नारी सम्मान एवं उत्कर्ष

भारतीय परम्परा में महिलाओं का सम्मान

पश्चिमी देशों के व्यवहार से सर्वथा विपरीत भारतीय परम्परा में स्त्री और पुरुष के प्रति भेदभाव के लिए कोई स्थान नहीं है। भारतीय दार्शनिक विश्वास के अनुसार स्त्री और पुरुष की युति से ही परिपूर्ण मानव का जन्म होता है। यह विचार अर्धनारीश्वर के प्रत्यय में साकार दिखाई देता है, जहां विश्व का सर्जनहार ईश्वर आधा पुरुष और आधा नारी के रूप में चित्रित [स्थित] है।

हिन्दू दर्शन में नारी का स्थान पुरुष से ऊंचा है। संस्कृत भाषा में ताकत और सामर्थ्य को स्त्रीलिंग शब्द ''शक्ति'' से अभिव्यक्त किया गया है। सभी प्रकार की सामर्थ्य का उद्‌गम स्थल नारी है। यहां तक कि पुरुषों में स्थित शक्ति की जननी भी नारी है।

प्राचीन काल में बहुधा धर्म से ही व्यक्ति के सामाजिक स्तर का निर्धारण होता था। वेदों ने स्त्री और पुरुष को समान स्तर प्रदान किया है। धार्मिक क्रियाकलापों में स्त्री-पुरुष आवश्यक रूप से सहभागी थे। वेदों में अनेक विदुषी नारियों का उल्लेख है। जैसे- विश्ववारा, गार्गी, मैत्रेयी, अपाला, घोषा और अदिति आदि। ब्रह्मज्ञान प्राप्ति के लिए देवराज इन्द्र ने विदुषी अदिति से उपदेश श्रवण किया था।

एक विवरण में ऋषिका विश्ववारा का उल्लेख है। अनेक वैदिक ऋचाएं महर्षि अत्री की पुत्री अपाला और इन्द्राणी की पुत्री घोषा को समर्पित हैं। स्पष्ट है कि वैदिक काल में महिलाएं भी पवित्र यज्ञोपवीत को धारण कर वेद ज्ञान प्राप्त कर सकती थीं। हारित ऋषि के अनुसार उस युग में सम्पूर्ण ब्रह्मचारिणी रह कर वेद के अध्ययन-अध्यापन को समर्पित महिलाओं को ब्रह्मवादिनी कहा जाता था।

पाणिनी की व्याकरण में आचार्य और आचार्या, उपाध्याय और उपाध्यायिनी का उल्लेख है, जिससे ज्ञात होता है कि उस समय महिलाएं केवल शिक्षार्थी ही नहीं अपितु शिक्षक भी होती थीं और वे गुरुकुलों में वैदिक शिक्षा प्रदान किया करती थीं। इसीलिए गुरु पत्नी को भारतीय परम्परा में पूजनीय माना गया है। उस युग की कतिपय विदुषी महिलाओं में काथी, कालपी और भाविसी उल्लेखनीय हैं।

ग्रीक-रोमन सभ्यता के कारण पश्चिम में नारी का स्तर निम्न रहा

परम्परा से भारतीय दर्शन और धर्म में नारी सम्मानजनक स्थान की अधिकारिणी है जबकि तुलनात्मक रूप से देखें तो पश्चिमी देशों में नारी की स्थिति दुर्बल और चिंतनीय है। इसका कारण ग्रीस और रोम देशों के सामाजिक और राजनैतिक विचार हैं। इन देशों के विचार महिलाओं के विरुद्ध हैं। निम्न विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाएगा-

ग्रीक दार्शनिक अरस्तु [384-324 ई.पू.] के समय से ही पश्चिमी संस्कृति की मुख्य धारा में महिलाओं को प्रवेश नहीं दिया गया। अरस्तु के आग्रहपूर्ण कथित वैज्ञानिक परामर्श के अनुसार ''पन्द्रह सौ वर्षों तक यही माना गया कि स्त्री एक दोषपूर्ण व्यक्ति है और मानव प्रजनन में महिला की सक्रिय भूमिका नहीं होती। इसलिए महिलाएं राजनैतिक गतिविधियों में भाग लेने और स्वतंत्रता का उपभोग करने के लिए उपयुक्त नहीं होती।'' [एच.जी. वेल्स, द आउटलाइन ऑफ हिस्ट्री, मैक्मिलन प्रकाशन 1921, न्यूयार्क, पृष्ठ 309]

रोमन भी इन विचारों से प्रभावित हुए और फिर सम्पूर्ण मध्यकाल में यूरोप में ये ही विचार छाए रहे। हम विशेष रूप से थॉमस एक्वीनास की शिक्षाओं को देखें। यह विचारक बाद में संत हो गए और इन्होंने अरस्तु की वैज्ञानिक अवधारणाओं का परीक्षण करते हुए 21 ग्रंथ लिखे तथा इन ग्रंथों में संत थॉमस एक्वीनास ने परमात्मा और समाज के समक्ष स्त्री की अधीनता का प्रतिपादन किया।

[see http://ww.evoyage.com/Book%20Reviews/Women%27sRoots.htm]

इस प्रकार पश्चिम में महिलाओं के प्रति दूषित पूर्वाग्रह ग्रीस, रोम से लेकर यूरोप में निरन्तर बना रहा। ग्रीक-रोम समाज शास्त्र की इस देन से नारी की स्थिति दयनीय बनी रही।

नारी सम्मान एवं उत्कर्ष

पश्चिमी देशों की स्त्रियां सम्मान की नहीं अधिकार की मांग करती हैं

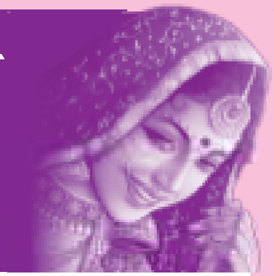

पश्चिम में नारी स्वातंत्र्य का आंदोलन इसलिए विकसित हुआ क्योंकि स्त्रियों को धार्मिक क्षेत्र में तो कोई सम्मान प्राप्त नहीं था, यहां तक कि उन्हें मतदान का भी अधिकार नहीं दिया गया। संयुक्त राज्य अमेरिका में महिलाओं को मतदान का अधिकार 1923 ई. में, इंगलैंड में 1926 में, फ्रांस में 1945 में, इटली 1945 और स्विट्जरलैंड में उन्हें यह अधिकार 1972 में जाकर दिया गया। किन्तु इस अधिकार प्राप्ति के संघर्ष में नर-नारी के बीच गंभीर विवाद ने जन्म लिया जिसका दुष्परिणाम पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं को अधिक भोगना पड़ा।

इस आंदोलन से महिलाओं को अधिकार तो मिला किन्तु सम्मान प्राप्त नहीं हुआ। आधुनिकता और महिला अधिकारों के नाम पर यह जो आंदोलन चला उससे वास्तव में पश्चिम ने नर-नारी संबंधों के माधुर्य को खोया, नारीत्व के प्रति असम्मान का भाव पैदा हुआ और पुरुषों की तुलना में महिलाओं का सम्मान घटा। पश्चिम के अधिकांश देशों में नर-नारियों की स्थिति का अवलोकन करने से यह बात प्रमाणित हो जाती है। सर्वाधिक विकसित सं.रा. अमेरिका में परिवारों तथा स्त्री-पुरुषों संबंधी निम्न तथ्य आंख उघाड़ने वाले हैंः-

41 प्रतिशत बच्चों को कुंआरी माताएं जन्म देती हैं। इनमें से प्रायः 50 प्रतिशत स्कूल जाने वाली किशोर बालिकाओं के बच्चे होते हैं। 1995 में स्त्री-पुरुष दम्पतियों की संख्या 55 प्रतिशत थी। 2010 में यह घटकर 48 प्रतिशत रह गई। 48 प्रतिशत विवाहित दम्पतियों में से केवल 18 प्रतिशत के ही संतान थी।

12 प्रतिशत एकाकी महिला परिवार तथा इसी प्रकार 15 प्रतिशत एकाकी पुरुष परिवार हैं। और 10 प्रतिशत परिवार एकाकी अभिभावक वाले हैं तथा शेष 15 प्रतिशत परिवार विहीन हैं।

11 प्रतिशत अमेरिकी जोड़े बिना विवाह किए साथ-साथ रहते हैं। प्रथम विवाह में से 55 प्रतिशत, द्वितीय विवाह में से 67 प्रतिशत तथा तीसरी शादी वाले जोड़ों में से 74 प्रतिशत का विवाह भंग हो जाता है।

लगभग 60 प्रतिशत अमेरिकन स्त्री-पुरुष विवाह ही नहीं करते।

अमेरिकी राष्ट्रपति ने 2012 ई. में अमेरिका में विवाह परम्परा को पुनः जीवित करने के लिए पहल की थी।

ग्रेट ब्रिटेन में तो स्थिति इससे भी अधिक खराब है। 47 प्रतिशत बच्चों का जन्म अविवाहित बालिकाओं और महिलाओं से होता है और इनमें से आधे बच्चों को विद्यालय जाने वाली किशोरियां जन्म देती हैं।

नारी सम्मान एवं उत्कर्ष

नवीन अध्ययनों से यह प्रकट हुआ है कि अधिकार-केन्द्रित आधुनिकता से पश्चिम की महिलाओं का आनन्द क्षरित हुआ है।

डब्ल्यू.एफ. प्राइस ने दिसम्बर 12, 2011 में एक लेख लिख कर ''महिलाओं की प्रसन्नता के रहस्य का प्रकटीकरण'' के विषय में कहा है कि ''सन् 1970 के बाद से अमेरिकी महिलाओं की प्रसन्नता का स्तर निरन्तर और तेजी से गिरा है। यह सब तब हुआ है जब समाज ने स्वयं को परिवर्तित करना प्रारंभ किया और अधिकाधिक महिलाओं की सत्ता में भागीदारी को स्वीकार करते हुए महिला समानता के घोष को मान्यता प्रदान की है। पेन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय के सन् 2009 से अब तक के अध्ययन में यह प्रतिपादित किया गया है कि सन् 1970 में पुरुषों की अपेक्षा महिलाएं अधिक प्रसन्न और संतुष्ट थीं किन्तु आज औसत रूप से महिलाओं की अपेक्षा पुरुष अधिक प्रसन्न और संतुष्ट हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका के वर्ष 1972 से 2006 तक के सामाजिक सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है कि वर्ष 1972 से महिलाओं का सामान्य प्रसन्नता का स्तर गिर गया है। आज से 40 वर्ष पूर्व के महिला और पुरुष के स्तर की तुलना में महिलाएं अधिक अप्रसन्न हैं।

1993 ई. के सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ कि 48 प्रतिशत महिलाएं सोचती हैं कि महिला स्वातंत्र्य आंदोलन से 20 वर्ष में महिलाओं की कठिनाइयां बढ़ी हैं। इन आंकड़ों और तथ्यों से पता चलता है कि परम्परागत विचारों को परिवर्तित करना कठिन है। विवाह-विच्छेद की घटनाएं बढ़ी हैं। फलस्वरूप अनेक महिलाओं ने अपनी आय में भारी गिरावट के साथ अपनी जीवनशैली को खो दिया है।

नारी सम्मान एवं उत्कर्ष

भारतीय परम्परा में जब-जब नारी का अपमान हुआ, तब-तब साम्राज्य विनष्ट हो गए

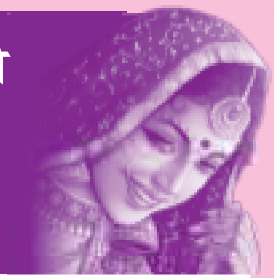

प्राचीन भारतीय साहित्य इस बात की साक्षी देता है कि जब भी कभी राज्य द्वारा एक भी स्त्री को अपमानित किया गया, तब-तब नगर, राज्य, साम्राज्य और सम्राट विनष्ट हो गए। निम्न तीन उदाहरण देखिये।

रामायण हमें शिक्षा देती है कि मात्र सीता का अपहरण करने के कारण रावण और उसका सम्पूर्ण साम्राज्य नष्ट हो गया। महाभारत से हमें शिक्षा प्राप्त होती है कि भरी राजसभा में महारानी द्रौपदी का चीरहरण करने वाले कौरवों का सम्पूर्ण विनाश हो गया। एलेंगो अडिगल शिलापथी ग्राम की घटना भी महान शिक्षाप्रद है। महान पांड्य सम्राटों की राजधानी मदुरै के तत्कालीन शासक नेंदुनचेजियन ने त्रुटिवश चोरी के झूठे आरोप में कोलवन को मृत्युदंड दे दिया। कोलवन की धर्मपत्नी कण्णगी ने अपने निरपराध पति की मृत्यु के विरुद्ध जनता-जनार्दन की शरण ली। सती के श्राप और जन आक्रोश से मदुरै नगरी जल कर राख हो गई।

इन परम्पराओं से यह स्पष्ट होता है कि जब भी किसी नारी के प्रति अपराध घटित किया जाता है, सम्पूर्ण राष्ट्र उस घटना की निंदा करता है और एकजुट होकर सुरक्षा और प्रतिकार के उचित कदम उठाता है। राष्ट्र एक व्यक्ति की भांति जाग उठता है। वर्तमान में भी दिल्ली बलात्कार कांड के अपराधी एक वर्ष के भीतर ही मृत्युदंड से दंडित कर दिए गए।

नारी सम्मान एवं उत्कर्ष

भारत में केवल नारियां भगवान ही नहीं होती अपितु महिलाओं को भगवान की तरह पूजा जाता है।

भारत से बाहर शेष विश्व में उत्पन्न सभी धर्मों में भगवान को केवल पुरुष ही माना जाता है। सच तो यह है कि उन धर्मों का यह विश्वास है कि भगवान ने अपने प्रतिरूप में मनुष्य को बनाया। यही कारण है कि पश्चिमी देशों के धर्मों में महिलाओं की स्थिति पुरुष से निम्न है। इस व्यवहार का परिणाम हुआ कि पश्चिमी देशों के आधुनिक इतिहास में महिलाओं को मतदान का अधिकार नहीं दिया गया।

किन्तु भारतीय परम्परा भगवान को नारी शक्ति के रूप में देखती है। कुछ देवता यथा-दुर्गा और काली तो पूर्णतया नारियां हैं। किन्तु कोई भी पुरुष देवता का अस्तित्व महिला देवी के बिना पूर्ण नहीं होता, चाहे वे शिव-पार्वती हों या विष्णु-लक्ष्मी।

सच तो यह है कि भारतीय परम्परा में शक्ति की उपासना नारी सामर्थ्य के रूप में की जाती है और वहां पुरुष की भूमिका मात्र एक प्रदाता के रूप में है। यहां तक कि तीन महान वैयक्तिक और सामाजिक शक्तियां जैसे कि शरीर, धन और ज्ञान की शक्तियां, महिला शक्तियों- दुर्गा, लक्ष्मी और सरस्वती में निहित मानी जाती हैं तथा इन्हीं रूपों में उनकी पूजा की जाती है।

केवल इतना ही नहीं है कि स्त्रियों में देवताओं का निवास माना जाता है अपितु स्त्रियों की जिस प्रकार से साकार देवियों के रूप में पूजा की जाती है, उस प्रकार से पुरुषों की कभी भी भारतीय समाज में पूजा नहीं की जाती है।

प्रसिद्ध फ्रांसिसी विद्वान लुइस जेकोलियट ने अपनी पुस्तक ''बाइबिल इन इंडिया, हिन्दू ऑरिजन ऑफ हिब्रू एण्ड क्रिश्चियन रिविलेशन'' अर्थात भारत में बाइबिल हिब्रू और ईसाई सन्दर्भों में हिन्दू मूल से उपजी है। लुइस कहते हैं-''वैदिक भारतीय समाज में महिलाओं का इतना अधिक सम्मान है कि वह नारी पूजा तक पहुंचा हुआ है। ऐसा हम यूरोप में कठिनाई से ही देख सकते हैं जबकि हम पूर्व [भारत] पर आरोप लगाते हैं कि वहां नारी का सम्मान नहीं होता और नारी को मात्र एक आनन्द प्रदाता और उदासीन आज्ञाकारी माना जाता है।'' वे यह भी कहते हैंः ''क्या! देखो यहां एक सभ्यता है जो तुम्हारी अपनी सभ्यता से प्राचीन है और इस सभ्यता में नारी को पुरुष के समकक्ष स्थान प्राप्त है और उसे पारिवारिक तथा सामाजिक मामलों में समान स्तर प्राप्त है।

भारतीय परम्परा में देवियों के रूप में नारी पूजा के कारण स्त्रियों को राजनीति में प्रोत्साहन प्राप्त हुआ

एक प्रसिद्ध प्रतिभाशाली महिला आशीष नन्दी कहती है कि भारत में स्पर्धा, आक्रामकता, शक्ति, क्रियाशीलता और अग्रगामिता को शारीरिक सामर्थ्य से जोड़ कर नहीं देखा गया है। सच तो यह है कि भारतीय चिन्तन परम्परा में, लोकगीतों में जो जीवनमूल्य निहित हैं, वे अघोषित सामाजिक दशाओं में यथा समय प्रकट हो जाते हैं। इनमें से अनेक योग्यताएं सहज रूप से महिलाओं में विकसित हो गई हैं।

एक नारी जागरण की अग्रदूत विदुषी जे. फ्रीडमैन ने कहा है कि पश्चिमी देशों की राजनैतिक संस्थाओं में महिलाओं की उपस्थिति में सबसे बड़ी बाधा यह है कि पश्चिम की नारी कभी शक्ति-सम्पन्न रही ही नहीं।

तावालामा ने भी पाया कि भारत माता की अवधारणा भारत के स्वतंत्रता संग्राम की प्रतीक बन गई थी। इन्दिरा गांधी का उदय और बंगलादेश युद्ध 1971 में पाकिस्तान के विरुद्ध उनकी विजय के अवसर पर उन्हें साक्षात् दुर्गा के रूप में संबोधित किए जाने से स्पष्ट है कि यह भारत में महिलाओं के शक्ति स्वरूपा होने का प्रभाव था।

फ्रांसीसी विदुषी स्टेफनी तावालामा ने कहा है कि 'हिन्दू देवी के रूप में नारी की सर्वप्रिय, सकारात्मक प्रतीक शक्ति की अवधारणा से दो देशों भारत और नेपाल में जहां हिन्दू धर्म बहुसंख्या में है, वहां राजनीति में महिलाओं का विशेष प्रभाव और प्रतिनिधित्व है। शक्ति की देवी बहुधा काली या दुर्गा होती है जो कि परिपूर्ण शक्ति है, सारे ब्रह्माण्ड में नारी शक्ति का अधिष्ठान है।'

नारी सम्मान एवं उत्कर्ष

महिलाओं के प्रति अत्याचार के विरोध में सम्पूर्ण राष्ट्र एक व्यक्ति की भांति उठ खड़ा होता है।

एक महिला पत्रकार एमर ओटूल ने ग्रेट ब्रिटेन के प्रतिष्ठित समाचार पत्र गार्जियन में [दि. 1.1.2013] यह चित्र प्रस्तुत किया है कि ''भारत में महिलाओं के प्रति अपराधों में भारी गिरावट आई है जबकि विकसित पश्चिमी देशों में ये अपराध बढ़े हैं।''

दिल्ली के बर्बर बलात्कार कांड व हत्या के विरोध में भारतीय समाज उठ खड़ा हुआ। इस अराजकता का प्रतिकार करने के लिए नर-नारी सड़कों पर उतर आए। स्थिति के नियंत्रण हेतु सेना को उतारा गया तथा पंजाब और हरियाणा राज्यों ने नव वर्ष समारोहों को निरस्त कर दिया।

एमर कहती हैं कि स्टेबेनविले में उत्साही नगर के लोगों ने पीड़िता को ही आरोपित कर दिया। वह कहती है कि इस दुष्कर्म की घटना को एक पत्रकार अलेक्जेंड्रिया गोडार्ड ने प्रकाशित कर दिया, जिसे बाद में न्यूयार्क टाइम्स ने भी प्रकाशित किया किन्तु अपराध घटित होने के चार माह बाद भी अमेरिका ने इस दुर्घटना पर संज्ञान तक नहीं लिया।

आंकड़े इस सत्य का उद्घाटन करते हैं कि भारत से 1/20 से भी कम आबादी के देश इंगलैंड में बलात्कार 95000 तक जा पहुंचे हैं। भारत में वर्ष 2008 में भारत सरकार के केन्द्रीय सांख्यिकी कार्यालय द्वारा प्रसारित प्रतिवेदन के अनुसार ब्रिटेन से बहुत ही कम अर्थात 20771 बलात्कार की घटनाएं हुई हैं।

अमेरिका और ब्रिटेन में समानता है- संयुक्त राज्य अमेरिका में वर्ष 2006 में 21200 बलात्कार के मामले दर्ज हुए। जो मामले दर्ज नहीं हुए उनसे ज्ञात होता है कि पांच प्रतिशत बलात्कारियों को अमेरिका में हमेशा एक दिन की जेल की सजा होती है। [अमेरिका का नीति प्रतिवेदन 229 जो केन्द्रीय नीति विश्लेषक केन्द्र द्वारा प्रकाशित किया गया है]

वहां प्रत्येक छह में से एक महिला बलात्कार के प्रयास या वास्तविक दुखद अनुभव से गुजरती है। [कोलेरिडो कोलिएसन अगेंस्ट सैक्सुअल साल्ट स्टेटिक्स]

अमेरिकी सरकार के अद्यतन प्रतिवेदन के अनुसार 20 प्रतिशत महिलाओं को अपने जीवन में लैंगिक अपराध को झेलना पड़ता है।

नारी सम्मान एवं उत्कर्ष

महिलाओं के प्रति अत्याचार के विरोध में सम्पूर्ण राष्ट्र एक व्यक्ति की भांति उठ खड़ा होता है।

महाविद्यालय स्तर पर अध्ययनरत महिलाओं में से 25 प्रतिशत को 14 वर्ष की उम्र से ही बलात्कार या बलात्कार के प्रयास का अनुभव करना पड़ता है। [कोलवास, एलिजाबेथः ग्रॉस एलान (2007)]

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि नैतिक मापदंडों पर सुसभ्य इंगलैंड और अमेरिका के आंकड़ों के अनुसार भारत में क्रमशः 1.6 लाख तथा 3.4 लाख बलात्कार होवें तो इन दोनों देशों के समकक्ष माने जाने चाहिए किन्तु इन देशों की तुलना में भारत में बहुत ही कम बलात्कार की घटनाएं होने पर भी भारत को बदनाम करने का प्रयास चलता रहता है। यह जानना होगा कि यदि ब्रिटेन भारत की भांति कथित अर्ध सभ्य देश होता तो इसकी बलात्कार की घटनाएं 1000 से अधिक नहीं होनी चाहिए थी और यदि अमेरिका भारत की भांति एक पिछड़ा देश होता तो अमेरिका में 5200 प्रतिवर्ष से अधिक बलात्कार नहीं होने चाहिए थे। इंगलैंड में भारत से 100 गुना तथा अमेरिका में 65 गुणा अधिक बलात्कार की घटनाएं होती हैं।

वैश्विक मानवीय विकास मापदंडों [एच.डी.आई.] में नार्वे विश्व का प्रथम देश माना जाता है किन्तु वहां दस महिलाओं में से एक महिला बलात्कार की शिकार होती है। [न्यूयार्क टाइम्स 17.4.2012]

बी.बी.सी. [14.9.2012] के अनुसार स्वीडन में प्रति एक लाख की आबादी पर दूसरी सबसे अधिकतम दर पर बलात्कार होते हैं जिसे एच.डी.आई. ने दसवां स्थान दिया है किन्तु फिर भी स्वीडन महिलाओं के लिए विश्व में सर्वोत्तम स्थान माना जाता है। [बी.बी.सी. 17.10.2010]

संयुक्त राज्य अमेरिका के ये आंकड़े प्रदर्शित करते हैं कि प्रति एक लाख पर स्वीडन में बलात्कार दर 63.5 है। अमेरिका में 27.5 है जबकि वहां 80 प्रतिशत बलपूर्वक किए गए दुष्कर्म प्रकट ही नहीं हो पाते। [नेशनल क्राइम विक्टिम्स रिसर्च एंड ट्रीटमेंट सेंटर रिपोर्ट, जुलाई 2007] अमेरिका में वास्तविक बलात्कार प्रति एक लाख पर 137.5 से अधिक है। अब भारत के आंकड़े देखिए। प्रति एक लाख पर मात्र 1.8 [देखिये www.uno&c.org लैंगिक हिंसा के आंकड़े]

भारत में महिलाओं के प्रति अपराध कम होने का मुख्य कारण यह है कि यहां स्त्रियों और बालिकाओं का परम्परा से सम्मान किया जाता है जबकि पश्चिमी देशों में नारी सम्मान की परम्परा नहीं है। इतना होने पर भी पश्चिम में नारी अधिक अधिकार प्राप्ति को आनन्द मानती है। महान सम्मान और गरिमा नारी को जो सुरक्षा प्रदान कर सकते हैं वह महान अधिकारों से प्राप्त नहीं हो सकते।

समसामयिक भारत में नारी की स्थिति कमजोर हुई है

एक भ्रामक धारणा विकसित की जा रही है कि भारतीय परम्परा में बालिका के जन्म का स्वागत नहीं किया जाता जिसके कारण भारत में लड़कों के अनुपात में लड़कियां कम हैं। यह एक भ्रम है। लिंग अनुपात में बालिकाओं की संख्या घटने का कारण आधुनिकता है न कि परम्परा।

भारत में बालिका के जन्म को परिवार में लक्ष्मी अर्थात सौभाग्य का आगमन माना जाता है। घर में सर्वाधिक प्रिय बालिका ही होती है। भारत में मान्यता है कि पारिवारिक संपत्ति और दायित्वों के निर्वहन के लिए पुत्र होना चाहिए और स्नेह का संसार रचाने के लिए पुत्री होनी चाहिए। मात्र सौ वर्ष पूर्व भारत में बालिकाएं अनुपात में अधिक थी। 1901 में 1000 पुरुषों पर 972 महिलाएं होती थी। 1951 ई. में यह अनुपात घट कर 1000 पर 946 हो गया। इसका सीधा-सीधा अर्थ यही है कि औपनिवेशिक शासन में, अंग्रेजों के काल में बालिका अनुपात में घटने लगी। बिहार जैसे परम्परागत राज्यों में 1901 में लिंगानुपात 1:61 [1061] था। अर्थात पुरुषों की अपेक्षा प्रति हजार इकसठ महिलाएं अधिक होती थी। किन्तु 1961 में यह घटकर 1:15 [1015] रह गया।

वर्ष 2011 ई. की जनसंख्या के अनुसार 1000 पुरुषों पर 940 महिलाएं थीं। यह अनुपात 1991 में घट कर 1000:927 रह गया जो 2001 में बढ़कर 1000:933 हो गया।

महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि भारत के नगरीय क्षेत्रों में, जहां कि आधुनिकता का अधिक प्रभाव पड़ा है, वहां ग्रामीण भारत जिस पर अभी आधुनिकता छाई नहीं है, की अपेक्षा लिंगानुपात अधिक घटा है। नगरीय भारत में अनुपात 926/1000 है जबकि ग्रामीण भारत में 947/1000.

एक बात और ध्यान देने की है कि भारत के वे राज्य जो कि अधिक विकसित और अधिक आधुनिक माने जाते हैं, उनमें महिलाएं- पुरुषों की अपेक्षा कम संख्या में हैं। अति विकसित राज्यों, दिल्ली में यह अनुपात 848/1000 है, जबकि हरियाणा में 756/1000 और पंजाब में 728/1000 है। इसलिए परम्परा ने नहीं अपितु आधुनिकता ने भारत में बालिका के महत्व को घटाया है।

नारी सम्मान एवं उत्कर्ष

व्यापक राष्ट्रीय हित में कन्या वन्दन और सुवासिनी वन्दन के द्वारा बालिकाओं और महिलाओं की गरिमा की पुनर्स्थापना आवश्यक है

युग-युग से चली आ रही प्राचीन परम्परा के माध्यम से बालिका और नारी का सम्मान तथा गरिमा का पुनर्निर्माण करना अत्यावश्यक है। भारतीय परिवार और समाज के हृदय में बालिका और महिला वर्ग के लिए अपार आदर है। हमारी संस्कृति में बालिका, महिला, माता और परिवार के मध्य स्वाभाविक सौहार्दपूर्ण तारतम्य पाया जाता है।

बालिकाओं के प्रति सम्मान महिला के प्रति सम्मान के रूप में विकसित होता है। महिला सम्मान माता और मातृत्व के रूप में परिवर्तित हो जाता है। माता और मातृत्व के प्रति सम्मान भारतीय परिवारों के हृदयों में निवास करता है। एक परिवार बुरे पिता को तो सहन कर सकता है किन्तु बुरी माता को सहन नहीं कर सकता। परिवार व्यवस्था ही हमारे समाज तथा हमारी अर्थव्यवस्था का आधार है और भारतीय परम्परा में संस्कृति, समाज और अर्थव्यवस्था की धुरी अर्थात केन्द्र-बिन्दु गृह स्वामिनी-नारी होती है। भारत में केवल पारम्परिक जीवन मूल्य ही बालिकाओं और महिलाओं को सुरक्षा प्रदान कर सकते हैं। भारत में 6.60 लाख गांव-कस्बे हैं किन्तु केवल 12800 पुलिस स्टेशन हैं। भारत की सुरक्षा सामाजिक मानदंडों से होती है। यही कारण है कि भारत में न केवल महिलाओं के प्रति अपराध दर कम है अपितु सामान्य अपराध दर भी अन्य देशों की तुलना में न्यूनतम है।

यही कारण है कि भारतीय परम्परा में बालिकाओं को कन्या के रूप में पूजित किया जाता है। यह कन्या पूजन प्रायः समस्त भारत में और भारत के समस्त समाजों-जातियों में लोकप्रिय है। इसी प्रकार सुवासिनी स्त्री [सौभाग्यवती स्त्री] मातृत्व का प्रतिनिधित्व करती है। अतः उसे गरिमा प्रदान की जाती है।

पश्चिम केन्द्रित आधुनिकता ने भारतीय समाज के समक्ष तीन चुनौतियां प्रस्तुत की हैं- बालिकाओं का असम्मान, नारीत्व और यहां तक कि मातृत्व का भी असम्मान। इसलिए भारत के परम्परागत विचारों के परिप्रेक्ष्य में वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार बालिका और महिला सम्मान का एक ऐसा प्रारूप विकसित करना होगा जो सर्वमान्य हो।

अतः आई.एम.सी.टी.एफ. ने कन्या वन्दन और सुवासिनी वन्दन के रूप में संस्कारों का एक ऐसा प्रारूप विकसित किया है जिससे कन्या और महिला को नारीत्व और मातृत्व के प्रतीक के रूप में गरिमा प्रदान करके भारतीय परिवार, समाज और अर्थशास्त्र के अधिष्ठान को सुदृढ़ किया जा सकता है।

पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों का समावेश
मातृ, पितृ एवं आचार्य वन्दन

हिन्दू आध्यात्मिकता से माता-पिता, गुरु और यहां तक कि अतिथि भी देवता की भांति पूजे गए

प्राचीन भारतीय परम्परा का उद्घोष है-'मातृ देवो भवः, पितृ देवो भवः, आचार्य देवो भव एवं अतिथि देवो भवः।'

माता-पिता का सम्मान पारिवारिक जीवन मूल्यों का अभिन्न अंग है। माता-पिता और गुरु की सम्मान परम्परा भारत के समस्त समुदायों और क्षेत्रों में रची-बसी है, एकात्म हो चुकी है। भारत की सभी भाषाओं में रचित साहित्य में विद्यमान है। प्राचीन तमिल सन्तों ने कहा है-'अन्नाइयुम पिथावम् मुन्नारी देवम' - अर्थात् माता और पिता हमारे प्रथम देवता हैं।

प्राचीन भारतीय विश्वासों का एक और महत्त्वपूर्ण पक्ष यह है कि माता-पिता की मृत्यु के बाद भी पिता-पुत्र के सम्बन्ध समाप्त नहीं हो जाते। ये सम्बन्ध निरन्तर पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलते रहते हैं और जीवित सन्तानें अपने दिवंगत पूर्वजों की पितरों के रूप में पूजा करती हैं तथा उनके प्रति श्राद्ध-तर्पण आदि अनेक अनुष्ठान सम्पन्न करती हैं। इस प्रकार मृत्यु भी माता-पिता और उत्तराधिकारियों को सम्बन्धों का विच्छेद नहीं कर सकती।

बौद्ध धर्म में माता-पिता को अर्हन्त-अर्थात् परिपूर्ण की भांति सम्मानित किया जाता है। वे अपने बच्चों के प्रथम शिक्षक माने जाते हैं। थाई बौद्धों की यह मान्यता है कि माता-पिता के चरण ही स्वर्ग के द्वार हैं। सम्राट अशोक का प्रमुख राज्यादेश घोषित करता है कि अहिंसा के बाद सर्वोच्च महत्व और कर्तव्य माता-पिता व गुरुजनों और उपदेशकों के प्रति कृतज्ञता है।

पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों का समावेश

मातृ, पितृ एवं आचार्य वन्दन

आधुनिकता ने कर्तव्य-भाव तथा माता-पिता और शिक्षकों के प्रति आदर की परम्परा को नष्ट कर दिया है।

भारतीय सन्दर्भों में माता-पिता और सन्तानों के बीच मात्र शारीरिक सम्बन्ध ही नहीं है, अपितु उनके बीच धर्म आधारित नैतिक सम्बन्ध हैं। धर्म पर आधारित ये सम्बन्ध परिवार के अन्य सदस्यों के प्रति भी हैं, यहां तक कि पड़ोसियों, शिक्षकों और अपरिचित जनों तक भी विस्तरित हैं। पारस्परिक सम्बन्धों का यह भाव हमारी वसुधैव कुटुम्बकम् की अवधारणा के आधार पर प्रकृति, समस्त प्राणियों और विधाता की सभी रचनाओं में भी व्याप्त है। हम सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार मानते हैं।

इस सम्बन्ध का आधार पारस्परिक कर्तव्य-भाव है। माता-पिता की बच्चों के प्रति, सन्तान की माता-पिता के प्रति, शिक्षकों की विद्यार्थियों के प्रति इसी कर्तव्य-भाव से हम बंधे हैं। भारतीय समाज पारस्परिक कर्तव्यों के पालन पर बल देता है।

किन्तु पश्चिमी जीवन दृष्टि द्वारा शासित सम-सामयिक विश्व अधिकारों से संचालित है। व्यक्ति का अधिकार अभिभावकों को, सन्तानों को, विद्यार्थियों का और पशु-पक्षियों के भी अधिकारों की मांग रहती है। अधिकारों की इस संविदा में अर्थात् लेन-देन या समझौते से सम्बन्धों परिचालित होते हैं जिससे मानवता पर आधारित सम्बन्धों का स्थान कानूनी संविदा ग्रहण कर लेती है।

संविदा के द्वारा सम्बन्धों के इस प्रतिस्थापन से कर्तव्यों का स्थान अधिकार ले लेते हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि माता-पिता, शिक्षक और गुरुजनों के प्रति सम्मान का भाव पश्चिम में वास्तव में विलुप्त हो गया है। परम्पराओं से सम्मान का निर्माण होता है किन्तु आधुनिकता सम्मान के सभी केन्द्र-बिन्दुओं को विनष्ट करती है।

इसका परिणाम बड़ा दुखद है। पश्चिमी देशों में पुत्र-पुत्रियां अपने माता-पिता की देखभाल नहीं करते और माता-पिता अपने बच्चों को शिक्षित करने में रुचि नहीं लेते और सभी एक-दूसरे को अपने-अपने भाग्य के भरोसे छोड़ देते हैं। वहां शिक्षकों का आदर नहीं होता। गुरुजनों के सम्मान का तो प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। पश्चिमी आधुनिकता का यही आधार है। फलस्वरूप परिवार संस्था नष्ट हो चुकी है।

पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों का समावेश

मातृ, पितृ एवं आचार्य वन्दन

यदि परिवार का पतन होता है तो वृद्धजन और युवा-जन निराश्रित हो जाते हैं।

यदि अधिकारों के प्रति सजग अभिभावक अपने बच्चों के प्रति कर्तव्य का पालन नहीं करते और युवा पीढ़ी अपने बुजुर्गों के प्रति अपने दायित्वों का निर्वाह नहीं करती तो सर्वत्र निराश्रित जनों के योग क्षेम का, जीवनयापन का भार सरकार को वहन करना पड़ता है। सरकारों को ऐसे लोगों की देखभाल सामाजिक सुरक्षा योजनाओं के द्वारा करनी पड़ती है। अधिकांश पश्चिमी देशों में ऐसा ही घटित हो रहा है।

अमेरिका में 51 प्रतिशत गृहपतियों में बालकों के माता और पिता साथ-साथ नहीं रहते। इसलिए बच्चों को या तो माता या पिता के साथ रहना पड़ता है। ऐसा मां-बाप के बीच तलाक तथा अविवाहित किशोरियों और महिलाओं के बच्चे पैदा हो जाने के कारण होता है। ऐसे गृह स्वामी एकल अभिभावक परिवार कहे जाते हैं। अमेरिका में 55 प्रतिशत प्रथम विवाह, 67 प्रतिशत द्वितीय विवाह और 74 प्रतिशत तीसरे विवाहों का समापन तलाक से होता है।

वहां स्त्री-पुरुषों को बिना विवाह किए साथ-साथ रहने का प्रतिशत बढ़कर 36 हो गया है। केवल 21 प्रतिशत परिवारों में ही माता-पिता और बच्चे साथ-साथ रहते हैं। 28 प्रतिशत दम्पती निःसंतान हैं। बी.सी.सी. के एक नवीन प्रतिवेदन में कहा गया कि अमेरिका और इंगलैंड में प्रत्येक तीन में से एक व्यक्ति एकाकी जीवन बिताता है। इंगलैंड में 26 से 30 वर्ष की आयु के लगभग प्रत्येक तीन में से दो पुरुष और छह में से पांच स्त्रियां घरों से बाहर रहती हैं। वैयक्तिक अधिकार आन्दोलनों के उदय से युवा अपने अभिभावकों को सम्मान नहीं करते तथा अभिभावक अपनी युवा संतति के प्रति अनादर का भाव रखते हैं। इस प्रकार वे एक-दूसरे को राज्य के भरोसे छोड़ देते हैं।

पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों का समावेश
मातृ, पितृ एवं आचार्य वन्दन

परिवारों के पतन से बचत समाप्त होती जा रही है और कर्ज बढ़ता जा रहा है

जैसे-जैसे परिवार का विघटन हुआ, प्रत्येक व्यक्ति स्वार्थी बन गया। पति और पत्नी के बीच आर्थिक विश्वास नहीं रहा और वे एक-दूसरे से अपनी संपत्ति और आय छुपाने लगे। परिवार और समाज की परम्पराओं के इस स्खलन से, बालक-बालिकाएं और स्त्री-पुरुष अपनी आदतों, व्यवहार और वस्त्रों में स्वेच्छाचारी और निर्लज्ज हो गए।

इससे प्रेरित होकर लोग दायित्वहीन और बेपरवाह जीवनशैली अपनाने लगे। कुछ उदाहरण देखिये। 1960 के दशक में अमेरिकी परिवारों की बचत राष्ट्रीय आय की तुलना में 80 प्रतिशत थी वह घट कर 2006 में ऋणात्मक हो गई। परिवार ऋणग्रस्त हो गए। इसी के कारण 2008 की वैश्विक मंदी का संकट आया। आज 11 करोड़ अमेरिकी गृहस्वामी 120 करोड़ क्रेडिट कार्ड रखते हैं जिससे उन्होंने 180 लाख करोड़ रुपयों का कर्ज कर लिया है।

पश्चिम की सबसे बड़ी समस्या उनकी विलासितापूर्ण और फिजूलखर्च जीवनशैली है जिससे पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह नहीं हो पाता और परिवार का क्षरण हो जाता है। इंगलैंड में 28000 करोड़ रुपयों के नए कपड़े खरीदे गए किन्तु उनका उपयोग नहीं किया गया और वे फेंक दिए गए। वाहन चालन के योग्य गृहपतियों में से 11 करोड़ अमेरिकियों में प्रत्येक के पास 25 कारें हैं।

संस्कृति और जीवन मूल्यों के क्षरण और अस्त हो जाने से माता-पिता, शिक्षक, गुरुजनों और स्त्रियों के प्रति सम्मान का भाव लुप्त हो गया है। अभिभावकों में बालकों के प्रति प्यार नहीं होने से पुत्र और पुत्रियां अपने अभिभावकों और संबद्ध जनों की देखभाल के प्रति उदासीन हो गए हैं। अभिभावक अपने पुत्र-पुत्रियों की शिक्षा और रोजगार के प्रति उदासीन हो गए हैं। परिणामस्वरूप उत्तरदायित्वविहीन होकर परिवार मात्र साथ-साथ रहने का नाम रह गया है।

पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों का समावेश

मातृ, पितृ एवं आचार्य वन्दन

आज से 5000 वर्ष पूर्व असुर गुरु बाहुक ने कंस को जो परामर्श दिया था, आज अमेरिका ने उसका पालन किया और वह अस्त हुआ है

अमेरिका और पश्चिम में पुत्र-पुत्रियां अपने माता-पिता का सम्मान नहीं करते फलतः वे उनको स्वीकार नहीं करते। बहिन-भाई को और भाई-बहिन को अपनत्व नहीं दे पाता है। परिणामस्वरूप वे सभी शासन के आश्रित हैं। भोजन तैयार करने वाली कंपनियों ने परिवारों के रसोईघरों के चूल्हे बुझा दिए हैं। सरकार वृद्ध और युवा वर्ग की देखभाल करती है जिससे परिवार निष्क्रिय बन गए। वर्ष 1980 में नेशनल ब्यूरो ऑफ इकॉनोमिक रिसर्च (नाबोर) ने अमेरिका को चेतावनी दी कि परिवारों के निष्क्रिय होने से उनका अस्तित्व समाप्त हो जावेगा। वह आज होता हुआ दिखाई दे रहा है।

इस प्रकार व्यवहार में परिवार राष्ट्रीयकृत हो गए हैं और सरकार ही वृद्धों के प्रति जवानों के और जवानों के प्रति वृद्धजनों के कर्तव्यों का निर्वहन कर रही है। 5 अक्टूबर, 2011 को बाल स्ट्रीट जर्नल ने लिखा कि 50 प्रतिशत परिवार किसी-न-किसी प्रकार से सरकार पर आश्रित हैं। यह आंकड़ा वर्ष 1983 में 30 प्रतिशत से और वर्ष 2000 में 40 प्रतिशत से कम था।

प्राचीन काल में मथुरा के राजा कंस ने अपने परामर्शदाता, चिन्तक व असुर गुरु बाहुक से पूछा कि वासुदेव के पुत्रों की बार-बार हत्या करने के कारण प्रजा मुझसे घृणा करने लगी है, ऐसी दशा में प्रजा को प्रसन्न करने के लिए मुझे क्या करना चाहिए?

आज से 5000 वर्ष पूर्व असुर गुरु बाहुक ने राजा कंस से कहा-अपने राजकोष को जनता पर लुटा दो, जिससे वे आनन्दमय जीवनशैली के अभ्यस्त हो जावें, इस प्रकार शक्तिशाली और संस्कार प्रदाता संस्था-परिवार को भंग कर दो। बालकों को अपने माता-पिता के प्रति उदासीन बनाओ। महिलाओं को शील के स्थान पर यौन आनन्द के लिए प्रेरित करो। एक बार जब जनता इस प्रकार के भोगवाद की अभ्यस्त हो जावेगी तो उनका प्रतिरोध समाप्त हो जावेगा। स्त्री-पुरुष पशुओं की भांति अपने चरवाहे के आश्रित हो जावेंगे। वे तुम्हारी चाबुक को भी प्रसाद, कृपा समझेंगे और तुम्हारी आज्ञाओं का पालन करेंगे।

आज अमेरिका में ऐसा ही हो रहा है। अधिकांश अमेरिकी नागरिक राज्य पर आश्रित हो चुके हैं। उन्होंने अपने पारिवारिक सम्बन्धों को तिलांजली दे दी है। निकोलस एलरस्टन ने अपनी पुस्तक 'संरक्षकों का राष्ट्र' में लिखा है-'सहायता के लिए सरकार पर निर्भरता ने अमेरिकी स्वाभिमान को घटाया है।' हमारे 'ज्वलन्त स्वातंत्र्य के सिद्धान्त' और हमारे 'आत्मसम्मान' को गहरी चोट पहुंची है।

पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों का समावेश

मातृ, पितृ एवं आचार्य वन्दन

पश्चिमीकरण से अभिभावकों के प्रति पुनः आदर का भाव जगाने को चुनौती मिली है। इसलिए मातृ-पितृ-आचार्य वन्दन के मूल्यों को परिवार और राष्ट्र के व्यापक हित में पुनः जागृत करने की आवश्यकता है

पश्चिमी भौतिकवादी सोच से भारत की माता-पिता-शिक्षक-अतिथि आदि के सम्मान की परम्परा को महत्त्वहीन माना जाने लगा है। माता-पिता के लाड़-प्यार तथा त्याग-बलिदान से पोषित किए गए उन्हीं के बच्चे आज उन्हें प्रताड़ित करने लगे हैं। अनेक माता-पिता वृद्धाश्रमों में रहने को बाध्य हैं। जिस समय उन्हें अपने बच्चों से प्रेम की आशा थी, उस समय उन्हें निराशा हुई। संसार में उनके प्रति कोई भी प्रेम से भरा प्याला लेकर सेवा में उपस्थित नहीं रहता। वे इस पीड़ा से चीत्कार कर उठते हैं।

यदि माता-पिता का विश्वास भंग हो जाता है तो वे भी अपने बच्चों की परिवरिश के प्रति उदासीन हो जाते हैं। माता-पिता स्वार्थी हो जावेंगे और अपनी बचत को अपने ही बच्चों के शिक्षा और स्वावलम्बन पर व्यय नहीं करेंगे। वे बेरोजगारी में उनकी सहायता नहीं करेंगे। इस प्रकार बालक और बालिकाएं माता-पिता के होते हुए अनाथ हो जावेंगे। इससे अन्योन्याश्रित संरक्षण की पारिवारिक सुरक्षा भंग हो जावेगी जिसकी स्थापना भारत में पारस्परिक कर्तव्य और धर्म के आधार पर की गई थी।

इसी उद्देश्य को लेकर आईएमसीटीएफ ने छह वैचारिक अधिष्ठानों की संरचना की है ताकि विद्यालयों में बच्चों को संस्कारों का प्रशिक्षण दिया जा सके। यह प्रयास आज के युग की महती आवश्यकता है।

पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों का समावेश
मातृ, पितृ एवं आचार्य वन्दन

विभिन्न भारतीय विश्वासों में गुरु का महत्त्व

हिन्दू आध्यात्मिकता, हिन्दू संस्कृति और हिन्दू सभ्यता में गुरु को सर्वोच्च सम्मान प्राप्त है। हिन्दू परम्परा में गुरुपूर्णिमा के पावन दिवस पर शिष्य अपने गुरु के प्रति श्रद्धाभाव समर्पित करता है। गुरु पूजा की परम्परा गुरु पूजा और गुरु से प्रेरणा प्राप्त करने का अवसर है। गुरु के प्रति समर्पण अर्थात् गुरु भक्ति, गुरु-शिष्य सम्बन्धों का आधार है।

कला, युद्धकला, संगीत, आयुर्वेद, योग सहित जीवन के सभी कौशल गुरु-शिष्य सम्बन्धों से अर्जित और विकसित होते हैं।

येरावेदा बौद्ध परम्परा में शिक्षक को प्रेरणा का स्रोत और महान् सम्मान का अधिकारी तथा पालक-निर्माता माना जाता है।

तिब्बत की बौद्ध परम्परा में शिष्य गुरु में भगवान बुद्ध के दर्शन करता है, वही आत्मसाक्षात्कार का मार्ग एवं आधार है। वहां शिक्षक के बिना कोई अनुभूति या अन्तर्दृष्टि प्राप्त नहीं हो सकती। दलाईलामा ने गुरु के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहा कि-'अपने मूल्यांकन हेतु गुरु की शिक्षाओं पर विश्वास रखो।' उन्होंने कहा-'तिब्बत में गुरु को 'लामा' शब्द से सम्बोधित किया जाता है।

सिख गुरु सिख पंथ के संस्थापक थे। सिख शब्द शिष्य का ही रूपान्तरण है तथा इस शब्द से गुरु-शिष्य सम्बन्धों का स्वतः बोध हो जाता है। सिख पंथ में गुरु को शिक्षक-नेता माना जाता है।

इसी प्रकार की मान्यता जैन धर्म में भी है।

पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों का समावेश
मातृ, पितृ एवं आचार्य वन्दन

गुरु के प्रति आदर भाव से भारतीयों का उत्कर्ष हुआ जबकि शिक्षकों के प्रति आदर भाव के अभाव के कारण अमेरिकी विद्यार्थियों की हानि हुई

अमेरिका के एक सुप्रसिद्ध शिक्षाविद डॉ. स्टीवन पैनी के अनुसार अमेरिका के अन्तर्राष्ट्रीय शैक्षिक स्तर को धन-बल पर नहीं बढ़ाया जा सकता, न ही यह कक्षा-कक्षों के महान् शिक्षण से ही प्राप्त किया जा सकता है। पैनी का सुझाव है कि शिक्षकों के प्रति सम्मान का अभाव हमारे शिक्षक स्तर का सबसे बड़ा शत्रु है। पैनी जोर देकर कहता है कि 'अमेरिका को शिक्षकों की प्रतिष्ठा और गरिमा पुनः स्थापित करनी होगी। हम भूतकाल में इसका आनन्द प्राप्त कर चुके हैं, केवल वेतन बढ़ाने से शिक्षण व्यवसाय की प्रतिष्ठा नहीं बढ़ेगी।

अमेरिका में एक उत्तेजक पुस्तक प्रकाशित हुई है, जिसका शीर्षक है-'कक्षा में सर्वप्रथमः किस प्रकार एशिया के अभिभावकों ने इस लक्ष्य को प्राप्त किया और किस प्रकार आप भी इस लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं?' पुस्तक में प्रश्न किया गया है-क्यों अनेक एशियन विद्यार्थी श्रेष्ठ प्रदर्शन कर पाते हैं? और उत्तर-'इसका रहस्य है अभिभावकत्व'। लेखक कहता है-जबकि एशियन-अमेरिकन-अमेरिका की आबादी का मात्र 4 प्रतिशत हैं। उन्होंने स्टेनफोर्ड में 24 प्रतिशत, हार्वर्ड में 18 प्रतिशत तथा कोलम्बिया और कॉर्नेल दोनों विश्वविद्यालयों में 25 प्रतिशत स्थान प्राप्त किए हैं। अधिकांश एशियन-अमेरिकी विद्यार्थी 25 वर्ष की आयु में स्नातक और स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त कर लेते हैं। वे अमेरिकी और अन्य देशीय विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक वार्षिक वेतन प्राप्त करते हैं। वेतन 10000 डॉलर। (वर्ष 2002 के आंकड़े)

पूछता है-क्या एशियन विद्यार्थी मात्र अधिक स्फूर्तिवान है? लेखक कहता है-नहीं। वे उन्नति करने के लिए भरसक प्रयास करते हैं। भारतीय विद्यार्थियों की पारिवारिक भूमिका बहुत स्पष्ट है-

- अपने से बड़ों का आदर करो और अपने अभिभावकों की आज्ञा मानो।
- उज्ज्वल भविष्य की प्राप्ति के लिए खूब पढ़ाई करो और कक्षा में अच्छे से पढ़ो।

यही कारण है कि 'एशियन अभिभावक शिक्षकों के प्रति सर्वोच्च सम्मान का भाव रखते हैं और इस भाव का अपने बच्चों में भी संचार करते हैं। एशियन अभिभावक कभी भी अपने बच्चों के शिक्षकों के अधिकार की अवमानना नहीं करता, उन्हें कमतर नहीं आंकते। वे शिक्षकों को मात्र मार्गदर्शक नहीं अपितु जीवन निर्माता मानते हैं। यदि आपके बच्चे अपने शिक्षक का सम्मान नहीं करते तो शिक्षकों के लिए भी यह अत्यन्त कठिन होगा कि वे विद्यार्थियों के प्रति समुचित भूमिका निभा सकें।

पारिवारिक एवं मानवीय मूल्यों का समावेश

मातृ, पितृ एवं आचार्य वन्दन

शिक्षकों के प्रति सम्मान से सीखने-सिखाने के प्रति सम्मान जागृत होता है

एक शिक्षक सांस्कृतिक और आध्यात्मिक प्रशिक्षण के लिए सम्मान का प्रतीक है। इसलिए शिक्षक के सम्मान का रूपान्तरण विद्यार्थी के लिए सीखने और शिक्षक के लिए सिखाने के प्रति सम्मान में हो जाता है। शिक्षक का सम्मान नहीं होगा तो शिक्षण का भी सम्मान नहीं होगा। यदि समाज, विद्यार्थी और अभिभावकों का व्यवहार शिक्षक के प्रति अवमाननापूर्ण होगा तो शिक्षक भी शिक्षण के प्रति रुचिशील नहीं होंगे।

पश्चिम के अनुभव से यह स्पष्ट है कि यदि एक बार यह सम्मान भाव तिरोहित हो जाता है तो फिर पछताने के अलावा कुछ भी शेष नहीं रहेगा। इस सम्मान भाव को पुनः स्थापित करना असंभव होगा क्योंकि यह मात्र तर्क पर आधारित कोई बौद्धिक विचार नहीं है अपितु एक सांस्कृतिक आदत है जो कि संस्कारों के सशक्तीकरण पर आधारित है।

आईएमसीटी आचार्य वन्दन संस्कार के द्वारा विद्यार्थियों, शिक्षकों, शिक्षाविदों, अभिभावकों और जन सामान्य में शिक्षक के प्रति सम्मान भाव जागरण और इसके माध्यम से सीखने-सिखाने के प्रति आदर का भाव स्थापित करने को प्रयत्नशील है।

आचार्य वन्दन के वैचारिक संस्कार के आधान हेतु आईएमसीटी ने विशेष प्रारूप विकसित किया है। यह प्रारूप प्राचीन भारतीय शिक्षक अवधारणा कि-शिक्षा एक सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और मानव निर्माण की प्रक्रिया है-पर आधारित है। शिक्षा मात्र एक पंथनिरपेक्ष और भौतिक उपादान नहीं है जो कि आंकड़े और ज्ञान-संग्रह को सफल जीवन का आधार मानते हैं।

शिक्षा राष्ट्र के भविष्य का निर्माण करती है। शिक्षकों के प्रति सम्मान के माध्यम से आज के अतिवादी युग में, पश्चिमी जगत की आधुनिकीकरण की धमक के बीच, शिक्षा को प्राकृतिक और सहज रूप से शिक्षक, अभिभावक, प्रकृति और अन्यान्य देशों के प्रति भी सम्मान भाव जागरण का साधन बनाने के लिए आईएमसीटी प्रयासरत है।

देशभक्ति की प्रतीक भारत माता

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम पूर्णतः भारत माता की भक्ति पर आधारित और संचालित था। भारत वन्दना के गीत वन्दे मातरम् से प्रेरित होकर सैकड़ों-हजारों नौजवानों ने अपने भविष्य और जीवन को भारत की स्वतंत्रता के लिए न्यौछावर कर दिया। अनेक नौजवानों ने वन्दे मातरम् का गान करते हुए फांसी के फन्दों को चूमा। मां भारती- हमारी भारत माता भारतीय राष्ट्रीयता और देशभक्ति की प्रतीक बन गईं।

गत एक शताब्दी में भारत माता का राष्ट्रीय मानवीकरण हुआ और मातृ देवी के रूप में वह हमारे हृदय सिंहासन पर आसीन हो गई। सिंहवाहिनी, हाथ में तिरंगा ध्वज लिए, सम्पूर्ण भारत को आच्छादित किए हुए मुकुटधारी भारत माता- इस देश का साकार रूप बन गई। यह चित्र प्रत्येक भारतवासी के हृदय में अंकित हो गया। भारत माता की यह छवि उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में बनी। श्री किरन चन्द्र बनर्जी ने 1873 ई. में सर्वप्रथम भारतमाता नामक नाटक का मंचन किया। सन् 1882 में श्री बंकिम चन्द्र चटर्जी के प्रसिद्ध उपन्यास- आनन्द मठ- में वन्दे मातरम् गीत प्रकाशित हुआ जो कि शीघ्र ही भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का जयघोष बन गया। भारत को एक हिन्दू देवी के रूप में प्रदर्शित करने से स्वतंत्रता आन्दोलन राजनैतिक, देशभक्ति पूर्ण प्रयास बन गया तथा साथ ही प्रत्येक व्यक्ति का इसमें भाग लेना धार्मिक कर्तव्य भी बन गया। भारतीय सेना सहित विभिन्न हिन्दू संगठनों द्वारा 'भारत माता की जय' का घोष किया जाने लगा।

1936 में महात्मा गांधी ने भारत माता मंदिर का उद्‌घाटन किया था और 1983 में विश्व हिन्दू परिषद ने हरिद्वार में भारत माता मंदिर का उद्‌घाटन तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के कर कमलों से करवाया। वाराणसी में मंदिर को लक्ष्य करके महात्मा गांधी ने कहा था, 'मुझे आशा है यह मंदिर सभी धर्मों, जातियों और हरिजनों सहित सभी वर्गों के लिए एक बहुआयामी जनमंच सिद्ध होगा और साथ ही देश में धार्मिक एकता, शान्ति और प्यार की स्थापना करेगा।' हरिद्वार का भारत माता मन्दिर विश्व हिन्दू परिषद द्वारा गंगा नदी के तटों पर स्थापित किया गया था।

भारत माता के विषय में स्वामी विवेकानन्द के विचार

स्वामी विवेकानन्द

आगामी 50 वर्षों तक यही हमारी आराध्य है.... यह, हमारी महान् भारत माता। कुछ समय के लिए शेष सभी देवताओं को हमारे मानस से विलुप्त हो जाने दो। केवल मात्र यही एक देवता है जो जाग्रत है, हमारी अपनी जाति में... 'सर्वत्र उसके हाथ, सर्वत्र उसके पैर, सर्वत्र उसके कान उपस्थित हैं, वह सर्वव्यापी है। शेष सभी देवता सोए हुए हैं, तब हम व्यर्थ देवताओं के पीछे क्यों भागें? और हम अपने चारों ओर उपस्थित विराट के दर्शन क्यों नहीं कर पाते? जब-जब हमने इसकी पूजा की है, हम अन्य देवताओं की पूजा करने में समर्थ हो जावेंगे।' स्वामी विवेकानन्द ने यह विचार 1897 में व्यक्त किए थे और स्वातंत्र्य योद्धाओं ने 'वन्दे मातरम्' का गान और भारत माता का जयघोष करते हुए फांसी के फन्दों को चूम लिया और जेलों को भर दिया। ठीक पचास वर्ष बाद 1947 में भारत आजाद हो गया।

इसी प्रकार एक शताब्दी पूर्व स्वामी विवेकानन्द ने समझ लिया था कि भारत एक विश्व शक्ति के रूप में उदित हो रहा है। विवेकानन्द ने यह सत्य तब ही देख लिया जब भारत कष्ट में, दरिद्रता में, भूख और गुलामी में डूबा हुआ था। तब उन्होंने यह कहा था-'एक जीवन्त दृश्य मैं स्पष्ट देख रहा हूं कि प्राचीन माता एक बार फिर जाग उठी है-अपने सिंहासन पर विराजमान-पुनः चिरकिशोरी, जैसी कभी गरिमामयी थी उससे भी अधिक गरिमामय और भव्य। वह सम्पूर्ण विश्व को अधिकारपूर्वक शान्ति और आशीर्वाद का संदेश दे रही है।' हिन्दू, राष्ट्र भक्त संत स्वामी विवेकानन्दजी की 150वीं जयन्ती के अवसर पर आज जब भारत फिर से हुंकार भर रहा है तो दि. 12.12.2012 को अमेरिका की केन्द्रीय इंटेलीजेंस एजेंसी (सीआइए) के विचार समूह ने एक प्रतिवेदन जारी करके बताया है कि आज से 17 वर्ष पश्चात् अर्थात् वर्ष 2030 में विश्व कैसा होगा? प्रतिवेदन में कहा गया है कि विश्व की तीन सर्वोपरि महाशक्तियों में से एक भारत होगा, शेष दो देश होंगे अमेरिका और चीन। स्पष्टतः यह स्वामीजी की दूरदृष्टि का प्रमाण है।

देशभक्ति का बीजारोपण

भारत माता के विषय में महर्षि अरविन्द एवं सुब्रह्मण्यम् भारती

महर्षि अरविन्द के अनुसार भारत केवल धरती, नदी और पहाड़ों का भूभाग नहीं है, न ही यह इस देश में निवास करने वालों का सामूहिक नाम है। भारत एक जीवन्त प्राणसत्ता है। भारत एक देवी है। वह अपनी इच्छानुसार मानवीय आकृति धारण कर सकती है। दार्शनिक और आध्यात्मिक मानस वाले विशिष्ट लोग भारत को एक विश्व माता के रूप में पहचानते हैं जैसा कि महर्षि अरविन्द की दुर्गा स्तुति में वर्णन है- दुर्गा माता ! सिंहवाहिनी, समस्त प्रकार की शक्तियों की प्रदाता... हम, आपकी शक्ति के अंश से जन्मे हैं, हम भारत के युवा, यहां आपके मन्दिर में बैठे हैं। हे माता ! हमारी पुकार सुनो, धरती पर अवतार लो, भारत की इस धरती पर स्वयं की मानवाकृति प्रकट करो।

महाकवि भारती

महाकवि भारती भारत माता को प्रकाशपुंज के रूप में देखते हैं और वेदों को भारत की वाणी मानते हैं। भारती का दृढ़ विश्वास था कि देशभक्ति निश्चय ही एक आध्यात्मिक विचार होना चाहिए। भारती ने भारत माता की समृद्धि के गीत गाए हैं, जैसे कि 'उछलते जलप्रपातों से समृद्ध, बसंत और शीतल हवाओं से प्रवाहित, महान् पर्वतों, जंगली जानवरों और उपयोगी पशुओं से भरपूर, यह एक समृद्ध देश है। केवल भौतिक सम्पत्ति में ही नहीं, अपितु यह आध्यात्मिक सम्पदा से भी भरपूर है। यही वह धरती है जिसने हजारों की संख्या में महान् विचारों को जन्म दिया है।' वह भारत के भौतिक स्वरूप की पूजा करते थे और उत्सव मनाते थे। 'यह गरिमामय हिमालय पर्वत हमारा है और धरती पर इससे तुलना करने वाला अन्य कोई पर्वत नहीं है। पवित्र और कल्याणकारी गंगा नदी हमारी है और अन्य कोई भी नदी इसकी कल्याणकारी क्षमता के समकक्ष नहीं है...। यह वेदों की धरती है। वे भारत माता को उपनिषदों सहित गंगा की धरती के रूप में पूजते हैं जो कि राष्ट्रीय शास्त्र हैं। उन्होंने जनता का आह्वान किया कि जाग उठो ! समय आ गया है और फिर इस प्राचीन देश भारत को स्मरण करो, हम इस भारत माता के पुत्र हैं और हमें यह बात कभी नहीं भूलनी चाहिये।'

विदेशी विद्वानों-दार्शनिकों के मत में भारत माता

विश्व के महान् विद्वानों की दृष्टि में भारत माता और उसकी संस्कृति, विरासत, धर्म और आध्यात्मिकता

अमेरिकन इतिहासकार विलड्यूरेन्ट

भारत हमारी जाति की मातृभूमि था और संस्कृत यूरोपीय भाषाओं की माता। भारत हमारे अरबों के माध्यम से दर्शन की माता थी, इसी प्रकार हमारी गणित की, ईसाईयत में अन्तर्निहित आदर्शों की, वह भगवान बुद्ध के माध्यम से माता थी तथा ग्राम समुदाय के माध्यम से वह हमारे स्वायत्त शासन तथा प्रजातंत्र की माता थी। भारत माता अनेक प्रकार से हम सब की माता है।

अर्नोल्ड टायनबी

यह पहले से ही स्पष्ट है कि पश्चिम में जिस अध्याय का प्रारम्भ हुआ, यदि उसे स्वयं और मानव जाति के विनाश में समाप्त नहीं होना है तो उसका समापन भारतीय विचार से होगा। मानव जाति के इतिहास के इस सर्वोच्च खतरनाक क्षण में, इस विनाश से मुक्ति, बचने का एकमात्र मार्ग है प्राचीन हिन्दू पथ। इस हिन्दू जीवन पद्धति में हमें वह दिशा और भावना प्राप्त है जो मानव जाति को एक परिवार की भांति एकात्म होकर विकसित होने का मार्ग दिग्दर्शित करती है।

अमेरिकन लेखक, मार्क ट्वैन

भारत ही मानव जाति की दीप शिखा है, मानव वाणी का उद्‌गम स्थल है, इतिहास की जननी है, विरासत की दादी है तथा परम्पराओं की महान् परदादी है। मानव जाति के इतिहास में हमारी सर्वाधिक मूल्यवान और सर्वाधिक प्रेरक उपलब्धियां हैं वे केवल भारतीय कोष में संग्रहीत हैं।

फ्रांसीसी विद्वान रोम्यां रोला

यदि धरती पर कोई एक स्थान है जहां मानव मात्र के समस्त स्वप्नों को एक घर प्राप्त होता है तो मानव जाति के इतिहास के सर्वप्रथम दिवस से, जबकि मानव ने अस्तित्व का स्वप्न संजोना शुरू किया, आज तक वह देश भारत है।

देशभक्ति का बीजारोपण

परमवीर वन्दनम्

परमवीर चक्र बहादुरी और बलिदान के उच्चतम प्रदर्शन के लिए दिया जाने वाला सर्वोच्च सम्मान है। यह भारत के स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद प्रारम्भ किया गया। अधिकतर वीरों ने अपनी जान देश पर न्यौछावर कर दी और उन्हें मरणोपरान्त यह सम्मान दिया गया। प्रथम परमवीर जिन्हें परमवीर चक्र से सम्मानित किया वे मेजर सोमनाथ शर्मा थे जिन्होंने भारत माता की रक्षा के लिए लड़ते हुए पाकिस्तानी फौज को छठी का दूध याद दिला दिया और श्रीनगर पर कब्जा नहीं करने दिया और आखिरी गोली, आखिरी सांस तक संघर्ष करते हुए मातृभूमि पर न्यौछावर हो गए। तब से लेकर अब तक बीस साहसी और पराक्रमी योद्धाओं को परमवीर चक्र से सम्मानित किया गया है।

परमवीर चक्र विजेताओं की सूची में भारत की सम्पूर्ण विविधता साकार होती है। इस सूची में हिन्दू, मुस्लिम, सिख और पारसी सभी मौजूद हैं। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक के भारत के प्रतिनिधि हैं, सभी तरह के भाषा-भाषी हैं। यह बताता है कि कैसे भारत एक देश, एक विचार के रूप में उठ खड़ा होता है अपनी मातृभूमि की संरक्षा एवं सुरक्षा के लिए।

भारत माता वन्दनम्
परमवीर वन्दनम्

वैश्वीकरण के दौर और आरामदेह जीवनशैली के विचारों ने राष्ट्र एवं राष्ट्रवाद के विचारों को कहीं कमतर महत्व पर पहुंचाया है। मातृभूमि और भारत माता का विचार पिछड़ता जा रहा है। वैश्विक गांव के अमूर्त विचार राष्ट्रवाद और राष्ट्रभक्ति जैसे विचारों को पिछड़ा विचार बताने का प्रयास कर रहे हैं। युवा कैरियर और धन के पीछे अपनी मातृभूमि को छोड़ कर जाने में गर्व महसूस कर रहा है और विदेशी नागरिकता ग्रहण कर रहा है। पिछले तीन दशकों में यह प्रवृत्ति काफी प्रचलित हुई है, हालांकि भारतीय अर्थव्यवस्था में पिछले कुछ समय में आए सकारात्मक बदलावों की वजह से इस प्रवृत्ति पर कुछ लगाम लगी है। भविष्य निर्माण के अलावा भी, विलासिता का जीवन आदि युवाओं को उच्च आदर्शों से दूर रख रहे हैं। आज का युवा मातृभूमि के लिए बलिदान होने वाले सच्चे हीरोज, सच्चे नायकों को भूलकर फिल्मी पर्दे के नायक, नायिकाओं के पीछे दीवाना हो रहा है। हमारी शिक्षा व्यवस्था में इस प्रवृत्ति को रोकने, प्रतिरोध एवं ठीक करने की कोई खास व्यवस्था नहीं है, चिंता का विषय यह है कि ऐसी आरामतलब प्रवृत्ति एक मुलायम समाज एवं दब्बू देश को जन्म देगी जिसे सख्त मिजाज दुनिया में टिकना है। यह जो दब्बू प्रवृत्ति है, इसी वजह से भारतीय सभ्यता का क्षरण हुआ है।

यह भी तय है कि इस प्रवृत्ति को सिर्फ भाषणों या किताबों से ना तो सम्बोधित किया जा सकता है, ना ही यथोचित उपचार किया जा सकता है। हमें युवाओं के दिल को छूने और उनके व्यवहार को प्रभावित करने के लिए अलग रुख अपनाना पड़ेगा। इसी को ध्यान में रखते हुए आईएमसीटी ने भारत माता वन्दनम् एवं परमवीर वंदनम् संस्कारम् का विचार प्रस्तुत किया है ताकि युवाओं में राष्ट्रीयता का भाव जागृत किया जा सके। भारत माता वन्दनम् में युवाओं को उन महान नायकों के बारे में बताया जाता है जिन्होंने प्राचीन भारत और भारत की आजादी के लिए अनथक संघर्ष किया। परमवीर वंदनम् में युवाओं को हमारी जल, थल एवं वायु सेना के लोगों द्वारा किए जा रहे सर्वोच्च बलिदानों के बारे में अवगत कराया जाता है जिसके विषय में उन्हें कुछ पता भी नहीं है। ना तो पाठ्यक्रम, ना ही संचार माध्यम और ना ही कोई और सार्वजनिक मंच युवाओं को हमाारे महान सैनिकों के बलिदान के बारे में बताता है। भारत माता को मां के एवं परमवीर को उसके पुत्र, जो कि मां के चरणों में पुष्प बन अर्पित हुए हैं, इन प्रतीकों के माध्यम से युवाओं का राष्ट्रीय भाव जगाकर उन्हें मातृभूमि के प्रति प्रेम एवं आदर भाव के लिए जागृत किया जा रहा है।

भारतीय आध्यात्मिक ज्ञान : वनों, वन्यजीवन एवं समसामयिक परिस्थितियों पर

महाभारत (वीरता पर्व) कहता है

बाघ (वन्यजीव) वनों का एवं वन क्षेत्र वन्यजीवों का संरक्षण करते हैं। वनों का अस्तित्व वन्यजीवों (बाघों) के बिना नहीं रहेगा और ना ही वन्य जीव वन क्षेत्र के बिना जीवित रह पाएंगे।

सामयिक तथ्य

जैसे-जैसे बाघों की संख्या घटी, वन नष्ट हुए हैं।

सन् 1900 में भारत में 40000 बाघ थे और वन क्षेत्र 42 प्रतिशत था, आज 1800 से भी कम बाघ बचे हैं और वनाच्छादित क्षेत्र घटकर सिर्फ 20 प्रतिशत रह गया है। अंग्रेज बंदूकें लेकर आए जिनसे हजारों बाघों को मार दिया गया और वन क्षेत्र नष्ट कर दिए गए।

अब हम बाघों और वनों दोनों को बचाना और बढ़ाना चाहते हैं।

आईएमसीटी संस्कार :
वन एवं वन्य जीव संरक्षण

संस्कार : पेड़ों के लिए आदर भाव जागृत करना (पेड़ वनों के प्रतीक हैं।)
वृक्ष वंदनम् और सांप (वन्य जीवन के प्रतीक) का नाग वंदनम् के द्वारा।

प्रतीक : वृक्ष वंदनम्

विषय : वन संरक्षण। प्रतीक : वृक्ष वंदनम् और संस्कारम् रूप में पेड़ों के प्रति आदर भाव

भारतीय आध्यात्मिकता में :
वनों, वन्य जीवन एवं पेड़ों का आदर

वन्य जीवन एवं वन्य प्राणियों का सम्मान तो हमारी संस्कृति का हिस्सा है, क्योंकि वन्य जीव ही तो हमारे देवी-देवताओं के वाहन हैं।

वायु : हजारों घोड़े, शेर, हरिण

वरुण : हंस, मगरमच्छ

पार्वती या दुर्गा या चंडी- शेर

राहु : शेर

केतु : गिद्ध

नृति : गधा, शेर

गंगा : मगरमच्छ

किसी भी अन्य आध्यात्मिक परम्परा में वन्य जीवन को दैवीय स्वरूप में सम्मान नहीं दिया गया है।

पेड़ों को ऋग्वेद और यजुर्वेद में पूजनीय और चरक संहिता में अभिनंदनीय माना गया है।

'पेड़ों को मत काटो क्योंकि ये प्रदूषण मिटाते हैं।'

ऋग्वेद (6:48:17)

'आकाश को बाधित और वातावरण को प्रदूषित मत करो।' यजुर्वेद (5:43)

'वनों को नष्ट करना राज्य नष्ट करने जैसा है, और वन लगाना, राज्य पुनर्निर्माण और लोक कल्याण जैसा है। जानवरों का संरक्षण एक पवित्र कर्तव्य है।' चरक संहिता

वन और वन्य जीवन की सुरक्षा के लिए सैकड़ों बिश्नोई स्त्री-पुरुषों का बलिदान : एक प्रेरक सत्य कहानी

राजस्थान में बिश्नोई समाज के दैनिक धार्मिक जीवन में पर्यावरण की रक्षा सर्वोच्च कर्तव्य है।

बिश्नोई पंथ हिन्दू धर्म की एक शाखा है और इस पंथ की स्थापना 15वीं शताब्दी में गुरु जाम्भोजी ने की थी। जांभोजी का विश्वास था कि यदि वृक्षों की रक्षा की जावेगी तो वन्य जीवन सुरक्षित रहेगा और समाज भी जीवन्त बना रहेगा।

इसलिए जांभोजी ने 29 नियमों का उपदेश दिया। उनमें से एक मुख्य नियम है- 'हमें वृक्षों की कटाई नहीं करना तथा किसी भी पशु-पक्षी को नहीं मारना।'

1730 ई. में अमृता देवी नाम की बिश्नोई महिला अपने गांव खेजड़ली जोधपुर रियासत के अपने घर में अपनी तीन बेटियों के साथ गृह कार्य में व्यस्त थी। तभी उसे ज्ञात हुआ कि जोधपुर के महाराजा ने अपने नवीन राजमहल के लिए खेजड़ी के वृक्षों को काटने का आदेश दिया है।

अमृता देवी ने राजा के सेवकों को खेजड़ी के वृक्ष काटने से रोका। वे नहीं माने तो अमृता देवी खेजड़ी के वृक्ष से लिपट गई। राज सेवकों ने वृक्ष के साथ अमृता देवी को भी काट दिया। अमृता देवी की तीनों पुत्रियों ने वृक्षों से लिपट कर अपने जीवन न्यौछावर कर दिए।

जंगल की आग की भांति यह समाचार बिश्नोई समाज में फैल गया और देखते-देखते सैकड़ों बिश्नोई आबाल-वृद्ध वहां आ पहुंचे। वे सभी पर्यावरण रक्षा के इस कार्य हेतु आत्मबलिदान करने को तत्पर थे। उनमें से 363 स्त्री-पुरुषों ने खेजड़ी वृक्षों का आलिंगन करके कुल्हाड़ियों की धार से कट कर बलिदान दे दिया। यह घटना खेजड़ी नरसंहार के नाम से विख्यात हुई। (पैनल 5 में चित्र देखिये)

जोधपुर महाराजा ने अपने अधिकारियों के इस कृत्य पर क्षमा प्रार्थना की किन्तु उसी दिन से यह घटना भारत के पर्यावरण रक्षण के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित होकर पर्यावरण प्रेमियों की अमर प्रेरणा बन गई।

बिश्नोई समाज की प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा के लिए इस महान् त्याग और बलिदान को विश्व में एक अपूर्व घटना के रूप में व्यापक प्रचार-प्रसार मिलना चाहिए।

भारतीय पर्यावरणविद वाल्मिकी थापर ने अपनी 1997 में प्रकाशित पुस्तक ''लैंड ऑफ द टाइगर'' में लिखा है कि 'भारतीय उपमहाद्वीप में आज भी रेगिस्तानी वन्य जीवन मात्र इसलिए सुरक्षित है कि इसका प्राथमिक कारण बिश्नोई समाज का पर्यावरण प्रेम है। (एम क्लिंटन 2007 से उद्धृत)

खेजड़ी नरसंहार : वृक्षों की रक्षार्थ बिश्नोइयों का बलिदान

वन एवं वन्य जीवों
का संरक्षण

पारिस्थितिकी
संरक्षण

पर्यावरण
संतुलन

पारिवारिक एवं मानवीय
मूल्यों का संवर्धन

नारी सम्मान
अभिवृद्धि

देश भक्ति भाव
जागरण

आत्मनो मोक्षार्थं जगत् हिताय च

ईशा वास्यम् इदम् सर्वं

Conserve Forests & Protect Wild life

Preserve Ecology

Sustain Environment

Inculcate Family & Human Values

Foster Women's Honour

Instill Patriotism

आत्मनो मोक्षार्थं जगत् हिताय च

हमारी वैचारिक प्रतिज्ञा

मैं वनों के प्रतीक रूप में वृक्षों का सम्मान करूंगा

मैं वन्य जीवन के प्रतीक रूप में नाग का सम्मान करूंगा

मैं प्राणी मात्र के प्रतीक रूप में गौ का सम्मान करूंगा

मैं प्रकृति के प्रतीक रूप में गंगा का सम्मान करूंगा

मैं पर्यावरण के प्रतीक रूप में धरती माता का सम्मान करूंगा

मैं मानवीय मूल्यों के प्रतीक रूप में माता-पिता का सम्मान करूंगा

मैं शिक्षण के प्रतीक रूप में शिक्षकों का सम्मान करूंगा

मैं मातृत्व के प्रतीक रूप में नारी का सम्मान करूंगा

मैं भारत माता के प्रतीक रूप में योद्धाओं का सम्मान करूंगा

मेलों के उद्घाटन समारोहों की झांकी